नूरे हिदायत फ़ाउण्डेशन का प्रकाशन नं0 12

इस्त्राईल
का
आतंकवाद

लेखक

शकील हसन शमसी

नाम पुस्तक

इस्त्राईल का आतंकवाद

लेखक

शकील हसन शमसी

प्रकाशन वर्ष

2008

संस्करण

प्रथम

प्रकाशक

नूरे हिदायत फ़ाउण्डेशन

इमामबाड़ा ग़ुफ़रानमआब, मौलाना कल्बे हुसैन रोड,

चौक लखनऊ-3

मुद्रक

निज़ामी प्रेस, विक्टोरिया स्ट्रीट, लखनऊ

मूल्य

50 रुपये

यह पुस्तक
हमास और हिज़्बुल्लाह
के उन जवानों को
समर्पित है
जिन्होंने दुनिया को यह बताया
कि युद्ध हथियारों से नहीं
ईमान की ताक़त से
लड़े जाते हैं।

विषय-सूची

हमारी बातें

बीसवीं सदी के इतिहास में संसार के मानचित्र पर 'इसराईल' और संचार के पटल पर आतंक (आज के अपने आशय में) जादुई टंकण है। इसराईल को सामाजिक–राजनैतिक इतिहास का एक बहुत ही अप्रकृतक (नाजायज़) और अद्‌भुत–रचना का नवजात कहा जा सकता है जिसे दूध के बजाय फ़िलिस्तीनी ख़ून पिला–पिला कर और आतंक का काला मांस खिला–खिला कर साम्राज्य ने पाला पोसा। (धर्म के आधार पर भारत की नापाक बन्दरबाँट ने साम्राज्य के हौसलों को इतना बल दे दिया था कि वह इसराईल का सतमासा गर्भपात करा के ज़िन्दा रख सके।) परन्तु इतिहास साक्षी है, कर्बला की क़सम, ख़ून वह भी अत्याचार और अन्याय का किया मज़लूम ख़ून वह नहीं होता जो आसानी से पच सके। यह अपचन यज़ीदी सोच को बौखला क्या, बौला न दे और ख़ून पीते सिंहासन को इतना अपमानित न कर दे कि स्वयं यज़ीद का ख़ून भी इसका ग्राहक न हो सके तो उसे मज़लूम ख़ून न कहियेगा। कुछ ऐसा ही अपचन आज इसराईल को लग गया होगा कि जाने अनजाने किस बेहाली और बेबसी में भारत के एक मुस्लिम शिष्टमण्डल को अपने यहाँ मेहमान बनाने पर उतर आया। (उसे क्या पता नहीं था कि भारत में अनर्थ ख़ून महाभारत से गीता का उपदेश और आशोक से अहिंसा का सन्देश दिलाता है।) फिर यही नहीं इसमें पत्रकार भागीदारी को भी मिला लिया। इस

शिष्टमण्डल से इसराईल का उल्लू सीधा हुआ हो या न, शकील शमसी की लेखन (प्रिन्ट) पत्रकारिता की बोहनी अवश्य हो गयी। मूलतयः श्रवदर्शन (इलेक्ट्रानिक मीडिया) का एक सदृश्य पत्रकार शमसी इसराईल की हथियाई धरती पर पत्रकार दृष्टि, फिलिस्तीनी दिल और मुस्लिम आत्मा लेकर गया। अपने ही कथनानुसार उस पत्रकार धर्म का गले लगाये गया कि एक पत्रकार दुश्मन का समाचार भेदी होता है और दोस्त की ख़बर रखता है। उसने इसराईल और आतंक को बहुत पास से देखा भाला, उनके पाताल वास्विकताओं का अवलोकन किया और फिर पत्रकार के खुले मन से इतिहास की रौशनी में विश्लेषण किया, अपने निष्कर्ष निकाले और सजीव प्रसारण किया। इसी को 'सफ़रनामा' के नाम से प्रस्तुत किया है।

नूरे हिदायत फाउण्डेशन, लखनऊ अपने विस्तारप्रद सेवाओं के क्रम में यह सफ़रनामा आपकी सेवा में सगौरव पेश कर रहा है। आप भी उनके साथ इसराईल और आतंक को देख लीजिए। देखियेगा, विद्वान लेखक का यह लेखनी चित्रण सफ़रनामे से कहीं ज़्यादा है। इसमें संवाद भी है संवेदना भी, गवेषणीय समालोचना भी है शोध–विश्लेषण भी, शायर की अनूभूति है और सामाजिक संवेदनशीलता भी।

ये हमारी 12वीं और हिन्दी भाषा की तीसरी प्रस्तुति है, इससे पहले भी हम शकील शमसी की एक और हिन्दी रचना 'अलमदारे कर्बला' प्रकाशित कर चुके हैं।

आशा है गणमान पाठकगण इसे भी हाथों हाथ लेकर क़लमकार का दिल और हमारी इज़्ज़त बढ़ायेंगे।

सै0 मुस्तफ़ा हुसैन नक़वी
''असीफ़ जाएसी''
सम्पादक मासिक ''शुआ–ए–अमल''

लखनऊ कुद्स दिवस/अलविदा
26 सितम्बर सन् 2008 ई0
25 रमज़ान सन् 1429 हि0

प्राक्कथन

इस्राईल की यात्रा पर जाने का निर्णय किसी युद्ध के मोर्चे पर जाने के फ़ैसले से कम नहीं था बल्कि जब हम जंग के मैदान में उतरते हैं तो अपने देश के वीर सपूत कहलाते हैं, पूरा देश हम को गर्व से देखता है, हम जीवित लौटें या मृत, दोनों ही हालात में हम को पुरस्कृत किया जाता है लेकिन जब बात इस्राईल की यात्रा पर जाने की हो और वह भी किसी ऐसे मुसलमान के जाने की बात जिसे एक सच्चा और कर्मठ मुसलमान समझा जाता हो तो यह काम और अधिक कठिन हो जाता है। मैं कितना पक्का और सच्चा मुसलमान हूँ इस बारे में तो कोई दावा नहीं कर सकता लेकिन बहरहाल मैं इस का दावा कर सकता हूँ कि मैं मुसलमान और इस्लाम पर गहरा विश्वास रखता हूँ।

मैंने इस्राईल के सफ़र पर जाने का निर्णय किया और लगभग तमाम तैयारियाँ पूरी भी कर की थीं मगर मुझे लगा कि शायद मैं अपने सफ़र के ज़रिये अपनी क़ौम के साथ या अपने क़लम के साथ उतना इंसाफ़ नहीं कर पाऊँगा जितना कि मेरे साथी शकील हसन शमसी।

मेरे मन में यह विचार आने की दो वजहें थीं पहली तो यह कि वह बेबाक और दिलेर पत्रकार थे दूसरे यह कि इस विषय पर उनका अध्ययन मुझ से बहुत ज़्यादा था और उनकी इस्राईल से वापसी के बाद यह बात साबित भी हो गई कि उनकी यात्रा कितनी सफल और ऐतिहासिक थी।

अब जबकि वह अपनी यात्रा के विवरण को एक सफ़रनामे के रूप में प्रकाशित कर रहे हैं तो मुझे पूरा विश्वास है कि मुस्लिम जगत इस सच्चाई से न सिर्फ़ परिचित होगा बल्कि फिलिस्तीनियों के दर्द को उन के सफ़रनामे के माध्यम से इस तरह महसूस करेगा कि

जैसे उसने यह मंजर अपनी आँखों से देखे हैं और अब न्याय व सत्य की माँग यही है कि फ़िलिस्तीन की आज़ादी के लिए उस पर भी जिहाद अनिवार्य है।

इस्लामी गणराज्य ईरान द्वारा हर वर्ष क़ुद्स दिवस मनाया जाता है और हज़रत इमाम खुमैनी का यह क़ौल है कि अगर दुनिया भर के मुसलमान एक एक बाल्टी पानी भी डाल दें तो दुनिया के मानचित्र पर मक्खी की फैलाई हुई गंदगी के बराबर इस देश का का वजूद बाक़ी नहीं रहेगा।

पाठकों के सामने चूँकि एक पूरी दस्तावेज़ है इस लिए मेरा इस विषय पर अधिक लिखना उचित नहीं होगा फिर भी मैं शकील हसन शमसी को मुबारकबाद पेश करते हुए अपनी क़ौम की ख़िदमत में यह अनुरोध ज़रूर करना चाहता हूँ कि यदि उन्होंने फ़िलिस्तीन के मामले को अगर आज अपना मामला नहीं माना तो आज यह आग भले ही उनके घरों से दूर सुलग रही हो मगर यह चिंगारी उनके आशियाने को जला कर राख कर देगी। मौजूदा हालात में जिन लोगों को इस मामले कोई शक की गुंजाइश नज़र आती है तो वह अफ़ग़ानिस्तान और इराक की तबाही का मंजर याद करें। यासिर अरफ़ात की मौत की वास्तविकता को जानें, बेनज़ीर भुट्टों के क़त्ल की हक़ीक़त को समझें तो मुमकिन है कि मेरी बात उनके दिल में उतर जाए और शकील हसन शमसी की केवल यही किताब ही इतिहास का वह न भूलने वाला अध्याय बन जाए जिस के ज़रिये आने वाली नस्लें भी आज की आँखों देखी हक़ीक़त को समझ सकें।ख़ुदा हाफ़िज़

अज़ीज़ बरनी

Group Editor Sahara Urdu Media

सेक्टर 11, नोएडा उत्तर प्रदेश

प्रस्तावना

यह किताब मेरी इस्राईल की यात्रा के दौरान लिखे गए उन निबंधों पर आधारित है जो उर्दू के सबसे बड़े दैनिक 'रोज़नामा राष्ट्रीय सहारा' में आठ क़िस्तों में प्रकाशित हुए थे। असल में पिछले वर्ष भारत से चार मुसलमान नेताओं पर आधारित एक प्रतिनिधि मंडल अमरीका और ऑस्ट्रेलिया में बसने वाले यहूदियों के न्योते पर इस्राईल के दौरे पर गया था। इस प्रतिनिधि मंडल के साथ भारत के तीन बड़े मीडिया हाउस के पत्रकारों को भी यहूदी संगठनों ने इस्राईल आने कि दावत दी थी। सहारा उर्दू मीडिया के ग्रुप संपादक श्री अज़ीज़ बरनी को भी इस प्रतिनिधि मण्डल में शरीक होने की दावत दी गई थी लेकिन कुछ कारणों से उन्होंने मुझे इस यात्रा पर भेजने का निर्णय लिया और रोज़नामा सहारा के लिए भारतीय प्रतिनिधि मंडल के दौरे की रिपोर्ट भेजने काम मुझे सौंपा। प्रतिनिधि मंडल की इस्राईल यात्रा काफ़ी विवादों से घिरी हुई थी क्योंकि भारतीय मुसलमान इस्राईल से संबंध रखने वाले किसी भी व्यक्ति को पसंद नहीं करते हैं इस लिए प्रतिनिधि मंडल की इस्राईल यात्रा का विरोध होना स्वाभाविक था। जैसे ही अख़बारों में इस प्रतिनिधि मंडल की इस्राईल की यात्रा ख़बर छपी, सारे भारत में एक हंगामा सा मच गया। उर्दू के कुछ अख़बारों ने इस मौक़े का फ़ायदा उठाने की कोशिश की और प्रतिनिधि मंडल का विरोध करने की आड़ में रोज़नामा राष्ट्रीय सहारा पर भी कीचड़ उछालना शुरू कर दिया हालाँकि पत्रकार बिरादरी को यह बात अच्छी तरह मालूम है कि कोई भी पत्रकार अपना फ़र्ज़ अदा करने के लिए किसी भी देश या किसी भी स्थान पर जा सकता है। पत्रकार को वेश्या के कोठे से भी ख़बर लाना पड़ती है और जुए के अड्डे से भी समाचार निकालना पड़ते हैं। लेकिन पत्रकारिता

की तमाम मर्यादाओं को किनारे करते हुए न केवल मेरे विरुद्ध बल्कि सहारा उर्दू प्रकाशनों के ग्रुप एडिटर श्री अज़ीज़ बरनी के विरुद्ध एक सुनियोजित अभियान चला दिया गया। वैसे तो इस प्रतिनिधि मंडल के साथ पी टी आई के श्री ज़ीशान हैदर और यू एन आई के सीनियर पत्रकार शेख़ मंज़ूर भी जा रहे थे परंतु उर्दू के अख़बारों का प्रमुख निशाना रोज़नामा राष्ट्रीय सहारा ही था।
इस सोची समझी मुख़ालिफ़त के कारण मेरे परिवार जन और दोस्त काफ़ी परेशान थे। वैसे देखा जाए तो इस से पहले मैं दो बार अमरीका की यात्रा भी कर चुका था लेकिन उस का कोई विरोध नहीं हुआ जबकि अमरीका तो मुसलमानों का इस्राईल से भी बड़ा दुश्मन है। यह बात मेरी समझ से बाहर थी कि इस्राईल जा कर वहाँ से रिपोर्टिंग करने में कौन सा ज़ुल्म हुआ जा रहा था? मेरा विरोध करने वाले को यदि पत्रकारिता के आदर्शों की थोड़ी सी जानकारी होती तो वह एक पत्रकार के विरुद्ध ज़हर उगलने के स्थान पर मेरी वापसी का इन्तिज़ार करते और मैं क्या लिख रहा हूँ उस की आलोचना करते तो बेहतर होता। ख़ैर जो कुछ हुआ सो हुआ,,,,,, मैं इस्राईल से लौटा और मेरे आलेख छपना शुरू हो गए। मेरे ग्रुप एडिटर ने मेरे पहले ही आलेख को अख़बार के प्रथम पन्ने पर आठ कालम की बैनर हैड लाइन के रूप में प्रकाशित किया तो सारे भारत के उर्दू पाठकों को यह बात समझ में आ गई कि अख़बार में क्या छपने वाला है, हालाँकि किसी पत्रकार का सफ़रनामा इस क़द्र अहम नहीं होता कि उस को अख़बार के प्रथम पेज पर बैनर हैड लाइन का स्थान दिया जाए लेकिन इस्राईल जाने से पहले जो हंगामा मचा था उस के कारण अनेक पाठक मेरी यात्रा की इस रिपोर्ट के इन्तिज़ार में थे। इस लिए रिपोर्ट के साथ यह ट्रीटमेन्ट हमारे ग्रुप एडिटर के तजुर्बे और पत्रकारिता पर उनकी पैनी नज़र का नतीजा था। हर दिन

पाठकों की दिलचस्पी मेरे आलेखों में बढ़ती ही गई।
इस बात को श्रेय राष्ट्रीय सहारा को ही जाता है कि किसी उर्दू के पत्रकार को पहली बार फ़िलिस्तीन जा कर वहाँ से रिपोर्टिंग करने का गौरव प्राप्त हुआ और फ़िलिस्तीन की जो सच्ची तस्वीर हमारे अख़बार ने दिखाई वह इस से पहले किसी ने नहीं देखी थी। हर दिन हम को फ़ैक्स, ई-मेल और टेलिफ़ोन के ज़रिये पाठकों की प्रतिक्रिया प्राप्त होती रही और हर दिन लोग अगली क़िस्त का इन्तिज़ार करने लगते। देश भर के उर्दू के पाठकों ने हर दिन मेरा हौसला बढ़ाया। जहाँ मैं जाता लोग मेरी तारीफ़ करने लगते। इतना ही नहीं बंगलौर की एक मुस्लिम संस्था ने मेरे सम्मान में एक शानदार समारोह का आयोजन किया जिसमें पूर्व केंद्रीय मंत्री श्री जाफ़र शरीफ़, कर्नाटक के पूर्व मंत्री श्री रोशन बेग व अनेक जाने माने मुस्लिम लीडर मौजूद थे। इन लोगों ने न सिर्फ़ मेरे सफ़रनामे की तरीफ़ कि बल्कि इसे एक किताब की शक्ल में प्रकाशित करने का आग्रह भी किया। कुछ माह पूर्व एक समारोह में जामिया मिल्लिया इस्लामिया विश्व विद्यालय के पूर्व उपकुलपति श्री शाहिद मैहदी से मुलाक़ात हुई तो उन्होंने मेरे सफ़रनामे की बहुत तारीफ़ की और इसे एक पुस्तक की शक्ल में लाने को कहा लेकिन इन सब बातों से ज़्यादा खुशी मुझे उस वक़्त मिली जब भारतीय मुसलमानों के दल को इस्राईल ले जाने वाली संस्था की प्रतिनिधि ने मेरे ख़िलाफ़ मेरे ग्रुप एडिटर से मेरी शिकायत की लेकिन चूँकि मेरे सफ़रनामे का एक एक शब्द सच था इस लिए मेरे ग्रुप एडिटर ने उन की शिकायत को ख़ारिज कर दिया। असल में इस्राईल की सरकार या उसके प्रतिनिधियों के पास मेरे सफ़रनामे के किसी शब्द को झूठ या मन गढ़ंत कहने का कोई मौक़ा ही नहीं था।
अब मेरा सफ़रनामा एक किताब की शक्ल में आप के सामने है।

मैं ने इस किताब में कुछ निबंध बढ़ा दिए है, ताकि इस्लाम और यहूदी धर्म के बीच के विवादों और समानताओं के बारे में कुछ जानकारी पाठकों को सफ़रनामा पढ़ने से पहले ही मिल जाए।
यहाँ पर यह बात कहना ज़रूरी है कि मेरे सफ़रनामे को जिस प्रकार सहारा उर्दू के ग्रुप एडिटर श्री अज़ीज़ बरनी ने प्रकाशित किया उसे शायद ही कोई अन्य संपादक इस तरह छापता। उन्होंने मेरे लिखे हुए लफ़्ज़ों में एक शब्द की भी काट छाँट नहीं की। हर रोज़ मेरा लिखा हुआ आलेख देखने के बाद मुझे फ़ोन कर के बधाई देते और यह कह कर मेरा हौसला बढ़ाते कि आप जब तक जी चाहे लिखें।
मुझे गर्व है कि मैंने एक ऐसे संपादक के मातहत काम किया जिस के सीने में इस्लाम और इंसानों का दर्द है और वह आज के यज़ीदों के ख़िलाफ़ बिना किसी ख़ौफ़ के जुबान खोलता है।
अंत में एक बात कहना ज़रूरी है कि वैसे तो अज़ीज़ बरनी साहब ने मेरा Selection उर्दू सहारा आलमी चैनल में कार्यक्रम प्रमुख के रूप में सीनियर प्रोडयूसर के पद पर किया था लेकिन उन्होंने मुझे प्रिन्ट की पत्रकारिता में अपने हाथ आज़माने का पूरा मौक़ा दिया। हर बुधवार को आज़ाद क़लम के नाम से मेरा कालम रोज़नामा राष्ट्रीय सहारा में छप रहा है। साप्ताहिक कालम तो मैं पहले भी लिखता रहा हूं लेकिन रोज़नामा से जुड़ने के बाद श्री अज़ीज़ बरनी ने मुझे प्रति दिन दो शेर लिखने के लिए भी कहा, जिनके ज़रिये मैं विभिन्न सामयिक विषयों पर टिप्पणी करता हूँ। इस पुस्तक का सारा श्रेय जनाब अज़ीज़ बरनी साहब को जाता है, अल्लाह उनको सकुशल और स्वस्थ रखे।

शकील हसन शमसी

मोबाइल नम्बर:00-91-9810949205

मुसलमान और यहूदी

इस में कोई शक नहीं कि मुसलमान और यहूदी अल्लाह को एक ही रूप में स्वीकार करते हैं। अल्लाह के भेजे हुए पैग़ंबरों हज़रत आदम, हज़रत नूह और हज़रत इब्राहीम को मान्यता देते हैं। दोनों धर्मों में पैग़ंबर हज़रत इब्राहींम का विशेष महत्व है इस लिए कई धर्म शास्त्री इन दोनों धर्मों के मानने वालों को चचेरा भाई भी कहते हैं।

यहूदियों को पैग़ंबर हज़रत यूसुफ़ के भाई हज़रत यहूदा का अनुसरण करने की वजह से यहूदी कहा गया। अँग्रेज़ी भाषा में यहूदा को Juda कहा जाता है इस वजह से इस धर्म को Judaism के नाम से भी पुकारा जाता है।

Juda अथवा यहूदा हज़रत यूसुफ़ के उन भाइयों में शामिल थे जो हज़रत यूसुफ़ को क़त्ल करने के लिए जंगल में ले गए थे लेकिन जंगल में जाने के बाद यहूदा ने अपने अन्य भाइयों से कहा कि यूसुफ़ को मारने के बजाए एक सूखे कुएँ में फेंक दिया जाए ताकि उधर से गुज़रने वाले किसी क़ाफ़िले के लोग यूसुफ़ को कुएँ से निकाल कर अपने साथ ले जाएँ। यहूदा के इस सुझाव के कारण हज़रत यूसुफ़ की जान बच गई। इस के बाद एक क़फ़िले के लोगों ने हज़रत यूसुफ़ को कुएँ से निकाला और मिश्र ले जा कर ग़ुलामों के बाज़ार में उन्हें बेच दिया। अल्लाह की मदद से हज़रत यूसुफ़ मिश्र देश के शासक बन गए। तब उन्होंने अपने बूढ़े पिता हज़रत याक़ूब को अपने पास आने का न्योता भेजा। जब हज़रत यूसुफ़ को अपने पिता के मिश्र आने की ख़बर मिली तो उन के मन में एक बार इतना सा विचार आया कि वह अपने पिता के स्वागत के लिए स्वयं जाएँ या नहीं। बस अल्लाह को यह ख़्याल पसंद नहीं आया (हालाँकि बाद में हज़रत यूसुफ़ खुद

अपने पिता के स्वागत के लिए गए थे) अल्लाह की नज़र में माँ बाप की जो अहमियत है उसी की वजह से अल्लाह ने पैग़ंबरी का सिलसिला यूसुफ़ की नस्ल से हटा कर यहूदा की नस्ल में परिवर्तित कर दिया।(अल्लाह को यहूदा का वह नेक काम पसंद आया था जो उन्होंने हज़रत यूसुफ़ की जान बचाने के लिए किया था इसी कारण पैग़ंबरी हज़रत यहूदा की नस्ल को मिल गई)

ईसा मसीह से तेरह सौ वर्ष पूर्व मिश्र की धरती पर अल्लाह के भेजे हुए एक अन्य पैग़ंबर ने जन्म लिया जो इस धरती को फ़िरऔन नामी दुष्ट शासक से इंसानों को निजात दिलवाने के लिए उतारा गया था। इस पैग़ंबर का नाम हज़रत मूसा था। इस पैग़ंबर को मुसलमान ईसाई और यहूदी आदर की नज़र से देखते हैं।

पैग़म्बर के अलावा यहूदा नाम का एक और आदमी इतिहास में मिलता है जिस को एक ईसाई धर्म के लोग बहुत बुरी नज़र से देखते हैं। यहूदा नाम के इसी व्यक्ति ने हज़रत ईसा मसीह के साथ चाँदी के सिर्फ़ चालीस सिक्कों के लिए धोखा किया था। इसी व्यक्ति ने हज़रत ईसा मसीह को फाँसी देने वालों यहूदियों का साथ दिया था और इसी व्यक्ति ने क़ातिलों से कहा था कि जिस व्यक्ति का मैं हाथ चूम लूँगा वही हज़रत ईसा मसीह होगा। जब यहूदा ने अंतिम भोज के बाद एक व्यक्ति का हाथ चूमा तो यहूदी धर्म के मानने वालों ने उस व्यक्ति को पकड़ लिया और पूरे यरोशलम शहर में उस व्यक्ति को यातनाएँ देते हुए घुमाया और अंत में एक ऊँचे स्थान पर ले जा कर उन को बहुत ही निर्दयता के साथ फाँसी पर चढ़ा दिया था। (मुसलमानों का विश्वास है कि जिस व्यक्ति की यहूदा ने निशान देही की वह हज़रत ईसा मसीह का हमशक्ल था। हज़रत ईसा एक गुप्त स्थान पर थे और इसी वजह से वह यहूदियों के अत्याचारों से सुरक्षित थे और तीन दिन

के बाद फिर वह जनता के सामने आ गए तो लोगों ने उन को प्रेत समझ लिया। मुसलमानों का यह भी मानना है कि हज़रत ईसा मसीह को अल्लाह ने जीवित ही आसमान पर उठा लिया है वह संसार में आख़िरी युग में हज़रत मैहदी के साथ एक बार फिर आएँगे और इंसानों को अत्याचारों से बचाएँगे।)

यहूदी धर्म के लोगों के पास इस बात का आज तक कोई जवाब नहीं है कि उन्होंने हज़रत ईसा मसीह को फाँसी क्यों दी? क्या सिर्फ़ इस लिए कि वह इंसानों के दुख दर्द दूर करते थे? वह अल्लाह के हुक्म से मुर्दा व्यक्तियों को ज़िंदा करते थे? क्या ईसा का यही गुनाह था कि यहूदी समाज में फैली बुराइयों को दूर करना चाहते थे? यहूदी धर्म के मानने वालों ने हज़रत ईसा के मानने वालों पर भी बहुत अत्याचार किए इसी कारण जब ईसाई धर्म के मानने वालों को सत्ता प्राप्त हुई तो उन्होंने यहूदी साम्राज्य की धज्जियाँ उड़ा दीं। (यहूदियों और ईसाइयों की बीच हुई लड़ाइयों का थोड़ा सा विवरण आगे के पन्नों पर दिया गया है।)

हज़रत मोहम्मद[स०] का आगमन

हज़रत ईसा मसीह को आसमान पर उठाए जाने के छै सौ साल बाद अल्लाह ने अपने अंतिम संदेश वाहक अथवा पैग़ंबर के रूप में हज़रत मोहम्मद (स०) को इस धरती पर उतारा। हज़रत मोहम्मद (स०) के इस धरती पर आने से पहले ही विभिन्न आसमानी किताबों में इस बात का उल्लेख मौजूद था कि ईश्वर का अंतिम संदेशवाहक आने वाला है। यहूदी और ईसाई इस पैग़ंबर के आने का इन्तिज़ार कर रहे थे। यहाँ तक कि इतिहास में यह भी लिखा है कि जब हज़रत मोहम्मद किशोरावस्था में अपने चाचा हज़रत अबू तालिब के साथ सीरिया की तरफ़ जा रहे थे तो एक ईसाई पादरी उन्हें रास्ते में मिला और उसने हज़रत अबू तालिब से कहा कि आप इस बच्चे को ले कर सीरिया कि ओर न जाइए क्योंकि वहाँ के लोग इस बच्चे को मार डालेंगे। ईसाई धर्म गुरु ने उन से कहा कि इस बच्चे में वह सभी गुण मौजूद हैं जिनकी हमारी किताबों में भविष्यवाणी की गई है। पादरी ने कहा कि इस बच्चे के साथ-२ बादल का टुकड़ा चल रहा है जिस के कारण बच्चे की परछाईं ज़मीन पर नहीं पड़ रही है। हज़रत अबू तालिब उस ईसाई धर्मगुरु की बात मान कर वापस मक्का चले गए। इस घटना के तीस वर्ष बाद जब पैग़ंबर साहब ने एकेश्वरवाद का प्रचार प्रसार शुरू किया तो क़ुरैश के बहु ईश्वरवादी समुदाय के साथ साथ यहूदियों और ईसाइयों ने भी उनकी बात मानने से इन्कार कर दिया। उस समय वह इलाक़ा (जो आज सऊदी अरब कहलाता है) तीन भागों में बटा हुआ था। एक हिस्से को नज्द कहा जाता था (जहाँ पवित्र काबा स्थित है) नज्द में क़ुरैश समुदाय का निवास था। दूसरे इलाक़े को हिजाज़ कहा जाता था जहाँ यहूदी बड़ी संख्या में आबाद थे। तीसरे इलाक़े को नजरान

कहा जाता था जहाँ ईसाइयों की घनी आबादी थी।
जब पैग़ंबर हज़रत मोहम्मद साहब ने बहु-ईश्वरवादी समाज में एक निराकार व निःस्वरूप अल्लाह को माने जाने का संदेश फैलाने की कोशिश की तो क़ुरैश का बहु ईश्वर वादी समाज उनके ख़िलाफ़ लाम बंद हो गया लेकिन उनके चाचा हज़रत अबू तालिब ने क़ुरैश का सरदार होने के कारण हज़रत मोहम्मद को पूरा संरक्षण प्रदान किया और हज़रत मोहम्मद का कोई कुछ बिगाड़ न सका।
अल्लाह की मदद से पैग़ंबर हज़रत मोहम्मद का संदेश नज्द से पहले हिजाज़ में फैल चुका था इस लिए जब हज़रत मोहम्मद के चाचा हज़रत अबू तालिब के निधन के बाद अबू लहब नाम के एक क्रूर व्यक्ति को क़ुरैश की सरदारी प्राप्त हुई तो उस ने हज़रत मोहम्मद को संरक्षण देने के बजाए उनको क़त्ल कर देने की साज़िश रच डाली। अल्लाह की ओर से हज़रत मोहम्मद को इस साज़िश की समय रहते सूचना दे दी गई और वह अपने चचेरे भाई हज़रत अली को (जो हज़रत अबू तालिब के बेटे थे) अपने बिस्तर पर सुला कर रात के समय ख़ामोशी से हिजाज़ के शहर यसरिब की ओर चल दिए। यसरिब में काफ़ी वर्षों से वहाँ के दो क़बीलों (बनी खजरज और बनी औस) में ख़ूनी संघर्ष चल रहा था। यसरिब के लोग चाहते थे कि पैग़ंबर हज़रत मोहम्मद वहाँ आ कर अमन व शांति का माहौल पैदा करें।
हज़रत मोहम्मद जब यसरिब पहुँवे तो वहाँ के मुसलमानों के साथ साथ यहूदी समुदाय ने भी पैग़ंबर साहब का स्वागत किया। असल में यहूदियों और मुसलमानों के बीच कई समानताएँ थीं। यहूदी भी अल्लाह को ही अपना ईश्वर मानते थे और उसकी एकता पर यक़ीन रखते थे, मुसलमान जिस मस्जिद कि तरफ़ रुख़ करके नमाज़ पढ़ते थे उसी को यहूदी भी अपना सब से बड़ा धर्मस्थल मानते थे। जानवरों को हलाल करने की विधि भी एक ही जैसी

थी। यहूदियों की तरह मुसलमान भी रोज़ा रखते थे (केवल अवधि और दिनों में फ़र्क़ था) दोनों धर्मों के लोग प्रलय और मरने के बाद क़यामत के दिन फिर से ज़िंदा किए जाने पर भी विश्वास करते थे । दोनों धर्मों में बच्चों का ख़तना भी किया जाना एक धार्मिक कार्य था। दोनों धर्म चाँद की तारीख़ों के अनुसार ही अपनी धार्मिक रस्में अदा करते थे। दोनों ही धर्म अपने धर्म की पहचान के रूप में बारीक से चाँद यानी Crescent को प्रयोग करते थे (बाद में यहूदियों ने खुद को मुसलमानों से अलग करने के लिए बारीक चाँद की जगह स्टार ऑफ़ डेविड को अपने धर्म की पहचान बना लिया।) यह सारी बातें इस लिए एक जैसी थीं क्योंकि दोनों ही धर्म खुद को पैग़ंबर हज़रत इब्राहीम का ही अनुयायी मानते थे।
इन समानताओं के साथ दोनों धर्मों के बीच कुछ बहुत अहम फ़र्क़ भी थे। पहला तो यह कि यहूदी हज़रत ईसा मसीह और हमारे पैग़ंबर हज़रत मोहम्मद को अल्लाह का संदेश वाहक नहीं मानते थे। दूसरा अहम फ़र्क़ यह है कि यहूदी खुद को अल्लाह की सब से पसन्दीदा क़ौम मान कर खुद को सभी दूसरे इंसानों से ऊँचा मानते थे जब कि इस्लाम इस के विपरीत सभी इंसानों को एक समान समझता था और इंसानियत के नाम पर किसी प्रकार के मतभेद का क़ायल नहीं था। यहूदी धर्म में एक ख़राबी यह भी पैदा हो गई थी कि उन्होंने अपने धर्म गुरुओं की पूजा करना शुरू कर दी थी। हज़रत मूसा द्वारा दिए गए Old Testament को बदल के रब्बाईयों ने अपनी लिखी हुई पुस्तक चलाना शुरू कर दी थी।
यहूदी धर्म में और मुसलमानों में दूरी का कारण शराब का सेवन भी था। मुसलमानों के धर्म में शराब हराम थी और यहूदी वर्ग के लोगों की नज़र में शराब पीना एक पवित्र धार्मिक कार्य था। पैसे

के लेन देन में सूद (व्याज) लेना इस्लाम में हराम था लेकिन यहूदी धर्म में व्याज पर धन चलाने का कारोबार बहुत अच्छा काम था। मज़दूरों, ग़रीबों, ग़ुलामों और कम आय वाले लोगों का शोषण करना यहूदियों का पसन्दीदा काम था जबकि मुसलमान लोगों कि इन सभी वर्गों के लोगों की मदद करना अनिवार्य था। यहूदी धर्म में यहूदी समुदाय के अलावा किसी दूसरे वर्ग के लोगों को मौलिक अधिकार प्राप्त नहीं थे। जब कि इस्लाम सभी धर्मों के लोगों के मौलिक अधिकारों का संरक्षक था।
पैग़ंबर हज़रत मोहम्मद जब मदीने पहुँचे तो उन्होंने यसरिब के एक ऐसे गुलशन में बदल दिया जिस में हर तरफ़ अमन और शांति के गुलाब खिले थे। पैग़ंबर साहब ने सभी वर्गों के साथ एक शांति समझौते पर दस्तख़त किए। इस समझौते में यहूदी धर्म के लोगों को इस बात की छूट दी गई थी कि वह अपने धर्म का आज़ादी से पालन करेंगे और हज़रत मोहम्मद को पैग़ंबर मानने पर बाध्य नहीं होंगे। उस समझौते में यह बात भी लिखी गई थी कि यदि मदीने में रहने वाले किसी भी समुदाय पर कहीं बाहर से आक्रमण होगा तो सभी लोग एक साथ मिल कर इस हमले का मुक़ाबला करेंगे। जब रसूल (स) ने यसरिब को अपना घर बनाया तो यसरिब को लोगों ने यसरिब कहना छोड़ दिया और प्यार से इस शहर को मदीनातुररसूल यानी रसूल का शहर कहने लगे। पैग़ंबर हज़रत मोहम्मदस०, उनके परिवार जनों और साथियों के आचरण और इस्लाम के संदेश से प्रभावित हो कर मदीने में बसने वाले अनेक यहूदी लोग इस्लाम स्वीकार करने लगे।
यहूदियों के इस पलायन को देख कर यहूदियों के धर्मगुरु परेशान हो उठे और उन्होंने हज़रत मोहम्मदस० के साथ विश्वासघात करना शुरू कर दिया। मुसलमानों के साथ हुए समझौते का ख़ुल्लम खुल्ला उल्लंघन करते हुए मदीने के यहूदियों ने पैग़ंबर

साहब के विरुद्ध होने वाले दो हमलों के मौक़ों यानी जंग-ए-आहज़ाब जंग-ए-ख़न्दक़ में हमला करने वाली सेनाओं का समर्थन किया। जिस के बाद पैग़ंबर साहब की सेना और यहूदियों में टकराव हुआ और पैग़ंबर साहब के सेनापति हज़रत अली ने यहूदी वर्ग के सब से बड़े सैनिक ठिकाने ख़ैबर पर अपना विजय ध्वज लहरा दिया। हज़रत अलीअ० ने ख़ैबर के क़िले के उस विशाल दरवाज़े को (जिसे खोलने और बंद करने का काम चालीस व्यक्ति करते थे) अकेले ही उखाड़ फेंका इस के बाद हिजाज़ में बसने वाले यहूदियों की कमर टूट गई और वह भविष्य में कभी भी मुसलमानों से टकराने का साहस न कर सके। हालाँकि इस शिकस्त के बाद भी यहूदी मुसलमानों के संरक्षण में ज़िंदगी गुज़ारते रहे।

यहूदी-ईसाई संघर्ष

यहूदी और ईसाई धर्म के बीच की जंग का इतिहास दो हज़ार वर्ष पुराना है। ईसाई धर्म के लोगों को यही भ्रम रहा कि हज़रत ईसा मसीह को यहूदियों ने ही फाँसी पर चढ़ाया था इस लिए दोनों वर्गों के बीच हमेशा से टकराव होता आ रहा था। जब ईसा मसीह के भक्तों को ताक़त प्राप्त हुई तो उन्होंने यहूदी साम्राज्य को नष्ट कर दिया। हज़रत ईसा के आसमान पर उठाए जाने के केवल 70 वर्ष बाद रोम की सेना ने यहूदियों की ताक़त को इस तरह तोड़ कर रख दिया और उन्हें अपने सपनों की उस धरती को छोड़ कर भागना पड़ा जिसको उनके धर्म ग्रंथ तौरैत में Eretz Yisra'el (इस्त्राईल की धरती) के नाम से पुकारा गया था। (इस्त्राईल को इस्त्राईल क्यों कहते है इस बारे में आगे के पन्नों में विवरण दिया गया है।)

छः सौ वर्ष तक यहूदी धर्म के लोगों पर ईसाइयों के अत्याचार जारी रहे जिसमें लाखों यहूदी मारे गए। यहूदी अपने सपनों की नगरी से निकल कर अरब देशों के अलावा यमन और ईरान के विभिन्न हिस्सों में पनाह लेने पर मजबूर हो गए।

मुसलमानों के क्षेत्र में यहूदी अपने धार्मिक कार्यों के लिए आज़ाद थे लेकिन ईसाइयों के इलाक़े में उनकी ज़िंदगी दुशवार थी। ईरान के बादशाहों ने रोमियों के अत्याचारों से बचाने के लिए बड़ी संख्या में यहूदियों को पनाह दे रखी थी। ईसाइयों ने यहूदियों के तमाम पवित्र मंदिर तोड़ दिए थे जिन में पहाड़ी वाला मंदिर यानी जबल हैकल भी शामिल था।

पैग़ंबर हज़रत मोहम्मदस० के निधन के दो साल बाद मुसलमानों के दूसरे ख़लीफ़ा हज़रत उमर को सत्ता प्राप्त हुई और उन की सेना ने ईरान के बादशाह यज़्दे गर्द को शिकस्त दी तो उस समय

फ़िलिस्तीन की धरती भी ईरानी शासक के मातहत थी। मुसलमानों को यरोशलम सहित पूरे फ़िलिस्तीन पर राज्य करने का मौक़ा मिला तो उन्होंने यहूदी समुदाय को ईसाई वर्ग के हमलों से बचाए रखा। लगभग 400 साल तक यहूदी वर्ग मुसलमानों के साये में चैन से रहा और अपने धार्मिक कार्यों को आज़ादी के साथ संपन्न करता रहा लेकिन 1099 में ईसाइयों को फिर से ताक़त मिल गई और उन्होंने मुसलमानों से फ़िलिस्तीन को छीन लिया। ईसाई सेना ने मुसलमानों के सब से पहले धर्मस्थल मस्जिद-ए-अक़्सा पर कब्जा करके उस पर क्रॉस का निशान लगा दिया। ईसाइयों के इस हमले में यरोशलम के हज़ारों मुसलमान और यहूदी शहरी मारे गए।
1187 में अल्लाह की मदद से सुलतान सलाह ऊद दीन अय्यूबी ने एक बार फिर फ़िलिस्तीन को ईसाइयों के चुंगल से आज़ाद करवाया। लेकिन सिर्फ़ 41साल बाद सुलतान सलाह ऊद दीन अय्यूबी के उत्तराधिकारी सुलतान अल कामिल की सेनाओं को हरा कर रोम के शासक फ़्रेडरेक ने 1228 में यरोशलम समेत फ़िलिस्तीन के सभी इलाक़ों को छीन लिया। फ़्रेडरेक इस धरती पर केवल 16 वर्ष तक ही क़ब्ज़ा बनाए रख सका। फ़्रेडरेक की सेनाओं के ईरान की ख़्वारिज़्म शाही सल्तनत ने 1244 में मात दे कर भगा दिया। उस के बाद से यहाँ मुसलमानों का ही शासक था। यह धरती कभी ममलूक वंश के कब्जे में रही तो कभी यहाँ तुर्कों ने राज किया। पहले विश्व युद्ध में हिटलर का साथ देने के कारण तुर्की की ख़िलाफ़त उसमानिया का अँग्रेज़ों के हाथों पतन हुआ तो इस धरती पर ब्रिटिश सरकार का राज्य क़ायम हो गया और इसी बीच एक बड़ी साज़िश के तहत दुनिया भर के यहूदियों को फ़िलिस्तीन में बसाने का काम शुरू हो गया।

सहयूनियत Zionism

फ़िलिस्तीन के सब से पवित्र शहर यरोशलम की दीवारों के बाहर एक छोटी सी पहाड़ी है जिसको जबल-ए-सहयून अथवा Mount Zion कहा जाता है। बाइबिल के विवरण के अनुसार इसी पहाड़ पर किसी ज़माने में यहूदियों का सब से पवित्र धर्मस्थल था जिस को हज़रत सुलैमान पैग़ंबर ने स्थापित किया था लेकिन इस धर्मस्थल को रोम की सेना ने सिकन्दर-ए-आज़म के ग़ायब हो जाने के कुछ वर्षों बाद गिरा दिया था। यह मंदिर इस तरह बरबाद हुआ कि इस का नाम ओ निशान तक नहीं रहा। रोम की सेनाओं ने अपने हमले के दौरान हज़रत इब्राहीम की बनवाई हुई मस्जिद को भी बरबाद किया। बाद में यहूदियों ने यह बात कहना शुरू कर दी कि उनका प्रमुख धर्मस्थल Temple Mount वहीं था जहाँ आज मस्जिद-ए-अक़्सा खड़ी है।

पिछले वर्ष जब मैं यरोशलम में था तो कई जगहों पर मैं ने जबले सहयून का मार्ग बताने वाले बोर्ड देखे और फिर इस पहाड़ी पर जाने का अवसर भी मिला। मैं ने एक बुज़ुर्ग फिलिस्तीनी से Mount Zion के बारे में पूछा तो उन्होंने बताया कि उन्नीसवीं सदी की शुरुआत में कुछ यहूदी रब्बाईयों (धर्म गुरुओं) और कई धार्मिक नेताओं ने इसी पहाड़ की ऊँचाई पर जमा हो कर उस देश की आधारशिला रखने की साज़िश रची थी जिसके बारे में उनकी पवित्र किताब तौरैत Torah में वायदा किया गया था। इसी पहाड़ पर रची गई नापाक साज़िश ने 14 मई 1948 को एक सहयूनी साम्राज्य की शक्ल में (ज़ोर ज़बरदस्ती की बुनियाद पर) दुनिया के नक़्शे पर अपनी जगह बना ली। जबले सहयून पर रची गई साज़िश से जुड़े होने के कारण ही यहूदी अपने आप को बड़े गर्व से सहयूनी कहते हैं।

जबल-ए-सहयून का अपना ऐतिहासिक महत्व भी है। यहाँ पैग़ंबर हज़रत दाऊद का मज़ार भी है। इस मज़ार पर मुसलमान, यहूदी और ईसाई श्रद्धा सुमन अर्पित करते हैं, हज़रत दाऊद(अ०) के मक़बरे के एक भाग में मुसलमानों की एक मस्जिद भी बनी हुई है। सहयून पहाड़ के एक भाग में ईसाइयों के लिए बहुत महत्व रखने वाला स्थान The room of last supper भी मौजूद है जहाँ हज़रत ईसा मसीह ने आख़िरी बार महा भोज में हिस्सा लिया था। ईसाइयों का एक क़ब्रिस्तान भी यहाँ पर मौजूद है।

हिटलर द्वारा किए गए कथित नरसंहार (Holocaust) की याद में इसी पहाड़ी पर एक संग्रहालय भी बनाया गया जिस को याद वशम कहा जाता है। जबल-ए-सहयून पर एक रास्ता ऐसा भी जिसको पोप मार्ग कहा जाता है, 1964 में (छठे) पोप पाल इधर से गुज़रे थे इस लिए इस सड़क को उनके ही नाम पर रख दिया गया। इसी पोप मार्ग को ज़माने में जार्डन और इस्राईल के बीच No man's Land का दर्जा प्राप्त था।

जबल-ए-सहयून का यहूदियों से इतना ही रिश्ता है कि किसी ज़माने में उनका धर्मस्थल इसी पहाड़ी पर था लेकिन यहूदी अपने आप को जिस गर्व के साथ सहयूनी कहते हैं उस से लगता है कि जबल-ए-सहयून पर बैठ कर इंसानियत को शर्मसार करने की जो साज़िश रचने में कामयाब हुए उसी की बुनियाद पर वह अपने आप को बड़े गर्व से Zionist कहते हैं।

Mount Zion पर रची गई साज़िश के कुछ ही वर्षों के अंदर विश्व के अन्य स्थानों में रहने वाले यहूदियों ने फ़िलिस्तीन की तरफ़ पलायन करना शुरू कर दिया। यह एक ऐतिहासिक सच है कि 1800 तक फ़िलिस्तीन में केवल 6700 यहूदी थे मगर इस साज़िश के बाद 1880 में यहूदियों की संख्या 24000 हो गई। उधर दूसरी तरफ़ फ़िलिस्तीन से दूर युरोप और अमरीका के कई

शहरों में इस्राईल की स्थापना की रूप रेखा तैयार की जा रही थी इस्राईल नाम के एक काल्पनिक देश को हक़ीक़त का रूप देने के लिए 1890 में Austro-Hungarian मूल के एक पत्रकार Theoder Herzl ने इस्राईल की स्थापना की योजना को खुले आम पेश कर दिया। इसी के साथ प्रस्तावित इस्राईल की ओर यहूदियों ने बड़े पैमाने पर प्रस्थान करना शुरू कर दिया, इस्राईल की ओर प्रस्थान करने वाले अधिकतर यहूदी कट्टर पंथी और अपराधी जेहनीयत के थे। 20वीं सदी शुरू होते ही यह सिलसिला और ज़्यादा तेज़ हो गया। 1915 में फ़िलिस्तीन में आबाद होने वाले यहूदियों की संख्या 87500 हो गई। 1920, 1921और 1931 में स्थानीय मुसलमानों के बीच कई बार दंगे हुए लेकिन यहूदी धर्म के मानने वालों का आना कम नहीं हुआ। इस तरह 1931ई० में इन लोगों की तादाद 174,000 हो गई। मुसलमानों के कड़े विरोध को शांत करने के लिए ब्रिटेन की सरकार ने फ़िलिस्तीन में दाख़िल होने वाले यहूदियों पर जुर्माना करना शुरू किया। झूठ मूठ के इस प्रतिबंध का भला क्या असर पड़ता यहूदी आते रहे और फ़िलिस्तीन में बसते रहे।

आतंकवाद की शुरुआत

1930 में यहूदी समुदाय ने मुसलमानों को डराने, धमकाने और आतंकित करने के लिए आतंकवाद का सहारा लिया। फ़िलिस्तीन से पहले दुनिया में कहीं इस प्रकार का आतंकवाद मौजूद नहीं था जैसा कि सहयूनी वर्ग के लोगों ने अपनाया। जैसा कि आप जानते हैं कि मनुष्य जाति ने अज्ञानता के युग में भी युद्ध के सिलसिले में कई उसूल बनाए थे। युद्ध में भाग न लेने वाले बूढ़ों, औरतों और बच्चों को हर युग का मनुष्य निशाना नहीं बनाता था। बाद में जब इंसान ने एक सभ्य समाज अपनाया तो उस ने युद्ध के लिए रणभूमि को शहरों और गाँवों से दूर चुनने का फ़ैसला किया। लड़ाइयाँ मैदानों में होने लगीं । हमारे देश में हज़ारों साल पूर्व महाभारत और रामायण के युग में जो युद्ध हुए उनमें मानवीय मूल्यों और संवेदनाओं का ध्यान रखा गया। इस्लाम फैलने के बाद तो युद्ध के मामले में और अधिक कड़े नियम बनाए गए। इस्लाम ने युद्ध से मुँह मोड़ कर जाने वालों, निहत्थे लोगों, बुद्ध जीवियों, धर्मगुरुओं, औरतों और बच्चों पर वार न करने और शहरों की आबादी को ध्वस्त न करने के आदेश दिए। इस्लाम ने युद्ध और प्रेम दोनों के लिए क़ानून बनाए और हर चीज़ जायज़ क़रार नहीं दी लेकिन सहयूनी धर्म में इस प्रकार की कोई व्यवस्था नहीं थी उनकी नज़र में युद्ध और मोहब्बत में सब कुछ जायज़ है। इसी मानसिकता ने 20 वीं शताब्दी में दुनिया को पहली बार Terrorism के नाम से परिचित करवाया। इन लोगों ने ऐसे हथियारबंद गिरोह बनाए जिन्होंने शहरों और गाँवों को रणभूमि में बदल दिया। युद्ध और मोहब्बत में हर चीज़ को उचित समझने वाला यह वर्ग निहत्थे शहरियों पर टूट पड़ा। एक तरफ़ दुनिया दूसरे विश्व युद्ध में उलझी हुई थी और दूसरी तरफ़ यहूदी

फ़िलिस्तीन के मुसलमानों पर आतंकवाद का हथियार आज़मा कर देख रहे थे।
यहाँ पर यह बात कहता चलूँ कि आतंकवाद के तीन ही रूप हैं: पहला रूप तो यह है कि कुछ हथियारबंद लोग किसी एक निहत्थे गिरोह पर हमला करके उस को बमों या बंदूकों से मार दे या कोई एक व्यक्ति किसी स्थान को बम से उड़ा दे या अपने बम बाँध कर किसी भीड़ वाले इलाक़े में जाए और वहाँ विस्फोट कर दे। इस प्रकार का आतंकवाद सहयूनी वर्ग से पहले कभी सुनने में नहीं आया था।
दूसरे प्रकार के आतंकवाद को सरकारी आतंकवाद कहा जाता है इस की शुरुआत हिटलर ने की थी। उस ने अपनी जनता को डराने के लिए Terror Machines बनवाई थी लेकिन आज भी कई देशों में निहत्थे नागरिकों को आतंकित करने के लिए सरकार की ओर से पुलिस या फ़ौज का सहारा लिया जाता है। इस्राईल इस मैदान में बहुत आगे है।
तीसरी तरह के आतंकवाद को Mob Terrorism कहा जाता है इस प्रकार के आतंकवादियों का तरीक़ा यह होता है कि वह हज़ारों की भीड़ जमा करते हैं और अल्प संख्यक वर्ग पर हमला करके उन्हें आतंकित कर देते है। इस प्रकार का आतंकवाद हमारे देश के संघ परिवार ने विकसित किया है लेकिन अफ़सोस की बात यह है कि इस प्रकार के आतंकवाद को सांप्रदायिक दंगे का नाम दे कर उसे बड़ी चतुराई से दूसरा रंग दे दिया जाता है। यहाँ पर यह भी बताना ज़रूरी है कि आतंकवाद के कई रंग होते हैं। एक पर धर्म का रंग होता है तो दूसरे पर जातीयता का तीसरे पर संप्रभुता और आज़ादी का तो चौथे पर नस्ल भेद का। कुछ लोग अपने विचारों को फैलाने के लिए भी बंदूक उठा लेते हैं। एक आतंकवाद वह भी होता है जो अल्प संख्यक वर्ग के विरुद्ध क़लम

या ज़ुबान द्वारा छेड़ा जाता है।
हम इस पुस्तक में आतंकवाद के केवल उस पहलू की चर्चा कर रहे हैं जिस की शुरुआत सहयूनी वर्ग ने की थी।
1930 से 1947तक फ़िलिस्तीन में सहयूनियों के चार आतंकवादी गिरोह सक्रिय थे और यह चारों गिरोह ऐसे थे जिन से जुड़े आतंकवादी बाद में इस्राईल के प्रधान मंत्री बने। पहले गिरोह का नाम था Irgun Zvai Leumi था। इस आतंकवादी दल का सब से प्रमुख नेता इसहाक़ शमीर नाम का एक सहयूनी था (जिसको इस्राईल बनने के बाद प्रधान मंत्री बनाया गया) इसहाक़ शुरू शुरू में इस गिरोह में सक्रिय रहा लेकिन कुछ वर्षों बाद इसहाक़ और गिरोह के नेता Zvai Leumi से मतभेद हो गया। इस के बाद इसहाक़ शमीर Lehi नाम के दूसरे आतंकवादी गिरोह में शामिल हो गया। Lehi का सरग़ना Avraham Stern नाम का एक आतंकवादी था जो ब्रिटेन की पुलिस के हाथों एक encounter में मारा गया उसके बाद शमीर Lehi गिरोह का मुखिया बन गया। Lehi गिरोह के आतंकवादियों ने मध्य एशियाई मामलों के ब्रिटिश राज्य मंत्री Lord Moyne की हत्या की और फ़िलिस्तीन में ब्रिटेन के उच्चायुक्त Harold Mac Michael पर क़ातिलाना हमला किया। लेकिन इस गिरोह का सब से घिनावना अपराध वह था जिस को दयार-ए-यासीन का नरसंहार कहा जाता है। इस घटना में Lehi के आतंकवादियों ने मुसलमान औरतों और बच्चों समेत सैकड़ों लोगों की निर्मम रूप से हत्या कर दी थी। इन्हीं अपराधों के लिए इसहाक़ शमीर के सिर पर दस हज़ार पौंड का इनाम भी घोषित किया गया था।
सहयूनियों के दूसरे खूँख़ार गिरोह का नाम Haganah था। इस का प्रमुख मीनाख़िम बेगिन नाम का एक सहयूनी नेता था। (यह आतंकवादी भी इस्राईल के प्रधान मंत्री के पद तक पहुँचा)

Haganah के आतंकवादियों ने पहली बार बम द्वारा किसी स्थान को उड़ाए जाने की कार्रवाई की। Haganah के कार्यकर्ताओं ने मीनाख़िम बेगिन के इशारे पर यरोशलम के King David होटल को 22 जुलाई 1946 को धमाके से उड़ा दिया। इस धमाके में ब्रिटेन के कुछ सिपाहियों समेत अनेक फिलिस्तीनी नागरिक मारे गए। इस धमाके के बाद ब्रिटिश सरकार ने मीनाख़िम बेगिन के सिर पर एक लाख पौंड का इनाम घोषित किया। इसी गिरोह के सदस्यों ने तलअबीब के मुस्लिम इलाक़े जोअफ़ा और बाएँ किनारे के हैफ़ा में मुसलमानों के घरों पर हमला करके अनेक मुसलमानों को क़त्ल किया। मगर इन सब गुनाहों की सज़ा मिलने के बजाए मीनाख़िम बेगिन को बाद में शांति का सर्वोच्च पुरस्कार नोबेल दिया गया।

इसराईली आतंकवादियों का एक और गिरोह Stern Gang के नाम से सक्रिय था। इस गिरोह का नेतृत्व भी एक ऐसे व्यक्ति ने किया जिसको इस्राईल का प्रथम प्रधान मंत्री बनने का गौरव मिला। बिन गुरियन नाम का यह सहयूनी नेता Stern Gang के उन आतंकवादियों के साथ था जो फ़िलिस्तीन के विभिन्न इलाक़ों में मुसलमान किसानों को आतंकित करके उन्हें फ़िलिस्तीन से भागने पर मजबूर कर रहे थे। Stern Gang के बंदूक धारी लोग मुसलमानों के गाँवों में घुस कर उनका ख़ून बहाते और उन्हें बंदूक के बल पर मजबूर करते कि वह अपनी ज़मीन सस्ते भाव में बेच कर फ़िलिस्तीन से चले जाएँ। ब्रिटेन की सरकार भी आतंकवाद के आगे सिर झुकाने पर मजबूर हो गई और उसने इस्राईल की स्थापना के मामले को संयुक्त राष्ट्र संघ को सौंप दिया। संयुक्त राष्ट्र संघ ने 29 नवंबर 1947 को फ़िलिस्तीन को दो भागों में बाँटने वाला प्रस्ताव 13 के मुक़ाबले 33 वोटों से पास कर दिया। UNGA Resolution 181 नाम के इस प्रस्ताव में

फ़िलिस्तीन को दो हिस्सों में बाँटने के साथ साथ यरोशलम को अंतर्राष्ट्रीय नगर घोषित किया जाना था ताकि यहूदी, ईसाई और मुसलमान इस शहर में बिना रोक टोक आ जा सकें
तो आपने देखा कि किस तरह की आतंकवादी कार्रवाइयों से इस्राईल की स्थापना हुई और इस्राईल बनने के बाद वह आतंकवादी जो ग़रीबों और निर्दोष लोगों का ख़ून बहाने के ज़िम्मेदार थे वह इस्राईल की स्थापना के बाद स्वतंत्रता सेनानी कहलाए और प्रधान मंत्री बना दिए गए । इस प्रकार की कार्रवाई से दूसरे वर्गों के लोगों को भी प्रोत्साहन मिला और उन्होंने भी आतंकवाद को अपना लिया। इस तरह दुनिया में आतंकवाद का काला नाग फन फैला कर बैठ गया।
इस्राईल बनने का प्रस्ताव पास होने के बाद यहूदी धर्म के लोगों ने फ़ौरन ही इस्राईल नहीं बना लिया बल्कि पहले अपनी हिफ़ाज़त के लिए अमरीका और ब्रिटेन से अरबों डॉलर के हथियार ख़रीदे और फिर 14 मई 1948 को इस्राईल नाम का ऐसा देश वजूद में आ गया जिस को कुछ आतंकवादियों ने अमरीका और इस्राईल की मदद से बनाया था। इस्राईल बनने के फ़ौरन बाद ग़ुस्से से तिलमिलाए हुए चार अरब देशों की सेना ने इस्राईल पर हमला कर दिया। आठ महीने तक यह युद्ध चला लेकिन अरब देश इस्राईल को मात नहीं दे सके क्योंकि वह लड़ाई इस्राईल की सेना नहीं बल्कि अमरीका और ब्रिटेन की सरकारें लड़ रही थीं। 1949 में दोनों पक्ष युद्ध विराम पर राज़ी हो गए और Armistice Agreement के बाद यह जंग रुकी तो एक नई फ़ायरबंदी लाइन बनाई गई जिसको ग्रीन लाइन का नाम दिया गया।
1967 में मिश्र के लोकप्रिय नेता जमाल अब्दुल नासिर ने सीरिया और जार्डन को साथ ले कर एक बार फिर इस्राईल के विरुद्ध मोर्चा खोल दिया। मेरे ख़्याल में ऐसा करने के लिए सी आई ए ने

नासिर को प्रेरित किया था। असल में सी आई ए की कोशिश यह थी कि इस्त्राईल को कुछ अरब देशों की तरफ़ से मान्यता मिल जाए ताकि इस्त्राईल नाम के देश का नासूर हमेशा के लिए मुस्लिम जगत के सीने में स्थापित हो जाए। नासिर ने इस्त्राईल की शक्ति के बारे में बिना जाने बूझे एक जोशीले मुसलमान की तरह हमला कर दिया लेकिन केवल छै दिन तक चली इस लड़ाई में अरब देशों को ऐसी मात का मुँह देखना पड़ा कि इस्त्राईल की धरती से एक इंच कम होने के बजाए अरबों को अपने अनेकानेक इलाक़ों से हाथ धोना पड़ा। इस्त्राईल की इस विजय में उसके हाथ यरोशलम का वह पवित्र नगर भी आ गया जिस को राजधानी बनाए बिना एक सहयूनी देश का सपना पूरा नहीं हो सकता था। यह युद्ध मुसलमानों और यहूदी सेनाओं के बीच था लेकिन पश्चिमी देशों के मीडिया ने इस को अरब इस्त्राईल युद्ध का नाम दिया ताकि दुनिया के दूसरे भागों में रहने वाले मुसलमान इस झगड़े का भाग न समझे जाएँ। जमाल अब्दुल नासिर के हार जाने के बाद मिश्र और जार्डन को अपनी खोई हुई धरती हासिल करने के लिए बहुत ही अपमान जनक संधि करने पर मजबूर होना पड़ा। अरब देश हमेशा के लिए ख़ामोश हो कर बैठ गए फिर फ़िलिस्तीन के कुछ नव युवकों ने इस्त्राईल से सीखे हुए आतंकवाद को अपना लिया और अपने लिए आज़ादी उसी प्रकार से हासिल करने की कोशिश कि जिस प्रकार से इस्त्राईल की स्थापना हुई थी। बहुत वर्षों तक यह मामला फ़िलिस्तीन तथा इस्त्राईल की समस्या के रूप में दुनिया के सामने पेश किया जाता रहा लेकिन 1979 में जब इरान की इस्लामी क्रांति को सफलता मिली तो इस क्रांति के सर्वोच्च नेता आयत उल्लाह इमाम खुमैनी ने इस्त्राईल की नाजायज़ स्थापना को दुनिया भर के मुसलमानों का सामूहिक दुश्मनी क़रार दिया। उनकी दमदार आवाज़ ने इस्लामी दुनिया में खलबली मचा

दी। लेबनान से इस्लामी सैनिक हिज़्ब उल्लाह के रूप में खड़े हो गए और फ़िलिस्तीन के वह मुसलमान जो अभी तक यासिर अरफ़ात जैसे धर्म-निरपेक्ष नेता के नेतृत्व में इस्राईल के विरुद्ध लड़ रहे थे वह भी अपने हाथों में इस्लाम का ध्वज ले कर निकल पड़े। जब से अरब-इस्राईल युद्ध का नारा बदला और पश्चिम एशिया के पुराने झगड़े ने सहयूनियत व इस्लाम के बीच के टकराव की शक्ल ले ली तब से इस्राईल को लगातार अपनी साज़िशों में नाकामी का मुँह देखना पड़ रहा है। इस्राईल को फ़िलिस्तीन के कई इलाक़ों को छोड़ने पर मजबूर होना पड़ा है और दो बार लबनान में हिज़्ब उल्लाह के हाथों ज़लील हो कर लबनान से भागना पड़ा है। सारी दुनिया के मुसलमान अब यह समझने लगे हैं कि पश्चिम एशिया का झगड़ा यहूदियों और मुसलमानों का झगड़ा है, केवल फ़िलिस्तीन और इसराईलियों का नहीं। मुस्लिम जगत में फैलते असंतोष की वजह से इस्राईल के लिए अपने वजूद को बचाए रखना मुश्किल हो रहा है। इस लिए इस्राईल में कई नेता यह बात खुले आम कहने लगे हैं कि इस्राईल को 1967 की सीमाओं में वापस चला जाना चाहिए।

ग्रेटर इस्राईल का सपना

जैसा कि पहले लिखा जा चुका है कि यहूदी भी मुसलमानों की तरह पैग़ंबर हज़रत इब्राहीम को अपना पूर्वज मानते हैं । हज़रत इब्राहीम के आठ बेटे थे जिनमें सबसे बड़े बेटे हज़रत इस्माईल थे (जिनकी कुर्बानी की याद में मुसलमान ईद उल अज़हा का त्योहार मनाते हैं।) उनके दूसरे बेटे का नाम हज़रत इसहाक़ था। हज़रत इसहाक़ के दो बेटे थे जिनमें एक का नाम हज़रत याक़ूब था। इनका दूसरा नाम इस्राईल था। इन्हीं के एक बेटे यहूदा से यहूदी धर्म को जोड़ा जाता है। यहूदियों के धर्म के अनुसार अल्लाह ने बनी इस्राईल (हज़रत याक़ूब के परिवार वालों को एक विशाल राज्य उपहार में दिया था जिसकी सीमाएँ फ़ुरात नदी से लेकर नील के दरिया तक फैली हुई हैं और यही वह धरती है जिस को उनकी धार्मिक पुस्तक में Eretz Yisrael Hashlema कहा गया है। जिसको हिंदी में इस्राईल की संपूर्ण धरती कहा जा सकता है। आज हम इस साम्राज्य पर अगर ग़ौर करें तो इस में फ़िलिस्तीन, लबनान, जार्डन, मिश्र, तुर्की, सीरिया, इराक और सऊदी अरब में स्थित मुसलमानों के पवित्र धर्म स्थलों वाले तमाम नगर शामिल हैं। यहूदियों का कहना है कि ईसा से 1000 वर्ष पूर्व इस क्षेत्र में किंग डेविड (पैग़ंबर हज़रत दाऊद) की हुकूमत थी जिस पर हर यहूदी का जन्म सिद्ध अधिकार है।

लेकिन कई यहूदी नेता अब खुले आम Greater Israel की बात नहीं करते क्योंकि वह जानते हैं कि इस सपने को अभी अधूरा रखने में ही उसकी भलाई है। परंतु इस्राईल में ऐसे लोगों की कोई कमी नहीं है जो ग्रेटर इस्राईल की बात करने के साथ साथ मस्जिद-ए-अक़्सा पर मुसलमानों का अधिकार नहीं मानते। उनके अनुसार पैग़ंबर हज़रत मोहम्मद कभी यरोशलम नहीं आए और

पवित्र क़ुरआन में उनकी जिस यरोशलम यात्रा का विवरण है वह केवल एक सपना था। जबकि मुसलमानों का यह मानना है कि पैग़ंबर हज़रत मोहम्मद मेराज की रात में यरोशलम की मस्जिद-ए-अक़्सा में न सिर्फ़ ठहरे थे बल्कि उन्होंने वहाँ नमाज़ भी अदा की थी।

इस्राईल की सरकार भी यही कहती है कि हम ग्रेटर इस्राईल की माँग का समर्थन नहीं करते हैं मगर यह भी एक सफ़ेद झूठ है क्योंकि इस्राईल का जो राष्ट्रीय ध्वज है उस में सफ़ेद रंग के कपड़े पर नीले रंग को दो दरिया दिखाई पड़ते हैं और इन दोनों दरियाओं के बीच में स्टार ऑफ़ डेविड बना हुआ हुआ है जो किंग डेविड की सल्तनत का सूचक है। इस में कोई संदेह नहीं कि ग्रेटर इस्राईल की स्थापना के लिए इस्राईल के लोग कई मुसलमान मुल्कों को तबाह करने की साज़िश रच रहे हैं ऐसे में अगर इरान के राष्ट्रपति श्री महमूद अहमदी निज़ाद इस्राईल को मिटाए जाने की बात करते हैं तो कौन सा जुर्म कर रहें हैं?

सहयूनी धर्म की धार्मिक किताब को अरबी में तौरैत और अँग्रेज़ी में Torah कहा जाता है। ईसाई धर्म के मानने वाले इस को Old Testament भी कहते हैं। इस पुस्तक के बारे में मुसलमानों का विश्वास है कि यह अल्लाह की तरफ़ से भेजे गए आदेशों का एक ऐसा संकलन था जिसको अल्लाह ने अपने पैग़ंबर हज़रत मूसा (अ) के माध्यम से दुनिया वालों तक पहुँचाया था (लेकिन अल्लाह द्वारा भेजे गए इस ग्रंथ में यहूदियों ने बहुत से परिवर्तन कर लिए इस के बाद अल्लाह ने हज़रत ईसा मसीह के माध्यम से इन्जील यानी बाइबिल भेजी जिस में कुछ समय बाद ईसाइयों ने परिवर्तन कर लिए तब अल्लाह ने हज़रत मोहम्मद के माध्यम से अंतिम ग्रंथ क़ुरआन को धरती पर उतारा।) तौरैत के अलावा भी यहूदियों की एक धार्मिक पुस्तक है जिसका नाम तलमुज़ (Talmud) है।

इस किताब में यहूदी वर्ग के रब्बाईयों और धर्मगुरुओं के प्रवचन और कथन एकत्रित किए गए हैं। इस पुस्तक में यहूदियों ने दूसरे धर्मों के बारे में बहुत ही घृणित बातें लिखी गई हैं। तलमुज़ में हज़रत ईसा की पवित्र माँ हज़रत मरियम और स्वयं हज़रत ईसा के बारे में बहुत ही अपवित्र टिप्पणी की गई है। तलमुज़ में महिलाओं के बारे में भी बहुत सी ऐसी घृणा भरी बातें लिखी गई है। इस पुस्तक में पुरुषों को इस बात का हक़ भी दिया गया है कि यदि उनकी पत्नी कुवांरी न हो तो वह उस के साथ जानवरों जैसा सुलूक कर सकते हैं। इस पुस्तक में सिर्फ़ यहूदी वर्ग को दुनिया का सर्वश्रेष्ठ मज़हब माना गया है। इस में मुसलमानों और ईसाइयों के धर्मों पर बहुत ही बुरे अन्दाज़ में पेश किया गया है। असल में यह पुस्तक कुछ संकीर्ण मानसिकता वाले धर्मगुरुओं द्वारा लिखी गई है, इसलिए इस में इंसानियत के विरुद्ध बातें होने के अतिरिक्त कुछ हो भी क्या सकता है? इस पुस्तक को यहूदी दूसरे धर्मों के लोगों के बीच प्रसारित नहीं करते, इस लिए अभी तक दुनिया वालों को पूरी तरह मालूम नहीं हो सका कि तलमुज़ में किस प्रकार का ज़हर उगला गया है। इस किताब की शिक्षाओं का एक प्रतिबिंब फ़िलिस्तीन की जनता के साथ यहूदियों के ज़ुल्म और सितम के रूप में देखा जा सकता है।

आगे के अध्यायों में आप इन अत्याचारों की एक झलक देख सकेंगे जो यहूदी वर्ग के लोग अमरीका की मदद से फिलिस्तीनियों पर ढ़ा रहे हैं।

अपने सफ़रनामे में मैंने इस्राईल में होने वाले ज़ुल्म-ओ-सितम का हलका सा चित्रण किया है पूरी तस्वीर तो कोई फिलिस्तीनी ही आप को दिखा सकता है क्योंकि सारा ज़ुल्म तो उन्होंने ही सहा है।

मैं इस्राईल क्यों गया?

जब मैं ने पत्रकारिता की दुनिया में क़दम रखा तो मेरे दिल में कई अरमान थे और कुछ तमन्नाएँ थीं। पहला अरमान तो यह था कि कभी संयुक्त राष्ट्र की बिल्डिंग के सामने खड़े हो कर रिपोर्टिंग का मौक़ा मिले। एक तमन्ना यह थी कि कभी भारत-पाक की सीमा पर खड़े हो कर लाईव प्रसारण का हिस्सा बनूँ। मेरी यह भी दिली तमन्ना थी कि कभी फ़िलिस्तीन का दौरा करने का मौक़ा मिले और मैं यरोशलम, ग़ाज़ा या रम्मला से कोई रिपोर्ट भेजूँ। अल्लाह का शुक्र है कि मेरी सभी तमन्नाएँ पूरी हुईं कुछ पहले मुमकिन हुईं और कुछ सहारा परिवार से जुड़ने के बाद पूरी हुईं। लेकिन अब भी दिल में कई ख़्वाहिशें बाक़ी हैं। पहली तो यह कि कभी इराक जाने का अवसर मिले और वहाँ से मैं कर्बला, नजफ़ या बग़दाद की डेट लाइन से अमरीकी सेनाओं की वापसी का आँखों देखा हाल बयान करूँ। दूसरी तमन्ना यह है कि कभी लबानान के क्रांतिकारी नेता और हिज़्ब उल्लाह के संचालक जनाब सय्यद नसर उल्लाह से इंटरव्यू करूँ। अपनी तमन्नाओं और ख़्वाहिशों की बात के बाद मैं अब अपनी यात्रा की कहानी शुरू करता हूँ।

अगस्त (2007) के दूसरे सप्ताह में मुझे अल्लाह की मेहरबानी से यरोशलम की उस मस्जिद में नमाज़ पढ़ने का मौक़ा मिला जिसको दुनिया भर के मुसलमान बैत-उल-मुक़दद्स या मस्जिद-ए-अक़्सा कहते हैं लेकिन यरोशलम का यह सफ़र आसान नहीं था क्योंकि यरोशलम पर यहूदियों का क़ब्ज़ा हो जाने के बाद अन्य देशों के मुसलमानों का इस पवित्र धरती से रिश्ता टूट गया है। चूँकि यहाँ आने जाने के लिए वीज़ा इस्राईल की सरकार जारी करती है इस लिए किसी मुसलमान के लिए यह आसान नहीं है कि वह इस्राईल की सरकार से वीज़ा हासिल करे। हालाँकि यह

धरती मुसलमानों के लिए बेहद पवित्र है और मुसलमान इस को प्रथम क़िबला कहते हैं। क़िबला उस केंद्र को कहा जाता है जिसकी ओर मुँह करके मुसलमान नमाज़ पढ़ते हैं।

इस्लाम का संदेश फैलने के बाद मुसलमान मस्जिद-ए-अक़्सा की तरफ़ रुख़ करके नमाज़ पढ़ते थे लेकिन बाद में पैग़ंबर हज़रत मोहम्मद ने अल्लाह के आदेश पर सभी मुसलमानों को हुक्म दिया कि वह पवित्र काबा की तरफ़ रुख़ कर के नमाज़ पढ़ें। इस के बावजूद मस्जिद-ए-अक़्सा की अहमियत मुसलमानों के लिए ज़रा भी कम नहीं हुई लेकिन आज हमारे इस पवित्र धर्म स्थल के दरवाज़े हमारे लिए ही बंद हो चुके हैं।

अजीब ऐतिहासिक सच यह है कि जब मौला-ए-कायनात हज़रत अली इब्ने अबी तालिब ने यहूदियों के सब से बड़े गढ़ यानी ख़ैबर के क़िले को ध्वस्त किया और मुसलमानों की सेना को शानदार विजय हासिल हुई तो मुसलमानों की तादाद उनके मुक़ाबले में बहुत कम थी लेकिन आज जब मुसलमान संख्या में उन से कहीं ज़्यादा हैं तो यहूदी हम पर अनेक प्रकार के ज़ुल्म कर रहे हैं। इस के कई कारण हैं। आज के मुसलमान वर्गों में बटे हुए हैं। विचारों के नाम पर बिखराव का शिकार हैं, वर्ग और फ़िरक़े के नाम पर फूट उनका मुक़द्दर बन चुकी है। मुस्लिम देशों के शासक अमरीका के हाथ की कठपुतली बन चुके हैं। आम जनता इस्लामी शिक्षाओं से दूर है और अधिकतर धार्मिक नेताओं को दीन से ज़्यादा दुनिया के भोग विलास में दिलचस्पी है। इन्हीं कारणों से आज मुठ्ठी भर यहूदी क़ौम के लोग फ़िलिस्तीन के मुसलमानों पर मनमाने अत्याचार कर रहे हैं लेकिन विश्व में दूसरे सब से बड़े धर्म के मानने वाले लगभग दो अरब मुसलमान बेबसी से यह मंजर देख रहे हैं।

एक लंबे समय तक इस्राईल के विरुद्ध मुसलमानों के संघर्ष को

अरब-इस्त्राईल युद्ध कहा जाता रहा ताकि दुनिया के दूसरे मुसलमान इस मामले से अलग रहें। इसी लिए जब कभी भी मुसलमानों से यहूदियों की लड़ाई हुई तीन चार अरब देश ही सेनाएँ ले कर सामने आए। आख़िरी बार अरब-इस्त्राईल के नाम पर 1967 में जो जंग लड़ी गई उस में मिश्र के लोकप्रिय नेता जमाल अब्दुल नासिर का बहुत बड़ा रोल था लेकिन उस युद्ध में मात खाने के बाद अरब मुसलमान अपने घरों में बैठ गए और फ़िलिस्तीन के मज़्लूमों को उनकी क़िस्मत पर छोड़ दिया गया। फ़िलिस्तीन के लोग यहूदी क़ौम के ग़ुलाम बन गए और दुनिया भर के मुसलमानों के लिए मस्जिद-ए-अक़्सा के दरवाज़े बंद हो गए। सिर्फ़ यरोशलम में रहने वाले मुसलमानों को इतनी छूट रही कि वह मस्जिद-ए-अक़्सा में पाँच वक़्त की नमाज़ पढ़ सकें। 1967 युद्ध में अपनी विजय पर यहूदियों ने बहुत जश्न मनाए। यहाँ तक कि एक जनूनी यहूदी ने मस्जिद-ए-अक़्सा का वह पवित्र मिम्बर (सीढ़ी जैसा लकड़ी का एक मंच जिस पर बैठ कर मुसलमानों के धर्मगुरु धार्मिक व्याख्यान देते हैं।) भी जला दिया। यह ऐतिहासिक मिम्बर सुलतान सलाह ऊद दीन अय्यूबी ने बनवाया था।

अरब मुल्कों के हार जाने के बाद फ़िलिस्तीन की आज़ादी की मुहिम को फ़िलिस्तीन के युवकों ने अपने हाथ में ले लिया और इस तरह इस्त्राईल के यहूदी साम्राज्य के विरुद्ध लड़ाई का दायरा और अधिक सीमित हो गया। लोग इस को इस्त्राईल और फ़िलिस्तीन का विवाद ही समझने लगे लेकिन ईरान की इस्लामी क्रांति के बाद हज़रत इमाम ख़ुमैनी ने पहली बार दुनिया के सामने यह सच्चाई पेश की कि इस्त्राईल की नाजायज़ स्थापना सिर्फ़ अरबों या फिलिस्तीनी जनता का मामला नहीं है बल्कि यह दुनिया के तमाम मुसलमानों का मामला है। इमाम ख़ुमैनी ने दुनिया भर के

मुसलमानों को आवाज़ दी कि वह फ़िलिस्तीन की आज़ादी के लिए एक जुट हो कर आंदोलन चलाएँ। मुसलमानों की नई नस्ल अपने सर्व प्रथम क़िबले को भूल न जाए इस बात को ध्यान में रखते हुए हज़रत इमाम खुमैनी ने रमज़ान के अंतिम शुक्रवार को यौम-ए-क़ुद्स का नाम दिया। (अरबी भाषा में यरोशलम को क़ुद्स शहर कहा जाता है इस लिए मुसलमान भी यरोशलम को क़ुद्स ही कहते हैं) इस प्रकार दुनिया भर के मुसलमानों में एक नई जागृति पैदा हुई और मुसलमान इस्राईल की दमनकारी सरकार के विरुद्ध एक जुट होने लगे हैं। अब पश्चिम एशिया में चल रहा संघर्ष, इस्राईल और फ़िलिस्तीन के बीच का विवाद न रह कर, इस्लाम और सहयूनियत के बीच का संघर्ष बनता जा रहा है। फ़िलिस्तीन की धरती पर नाजायज़ क़ब्ज़ा करने वाले इसराईली जानते हैं कि जब तक पश्चिम एशिया का विवाद उसी क्षेत्र तक सीमित है तब तक वह अपनी मनमानी कर सकते है लेकिन एक बार इस विवाद ने इस्लाम बनाम सहयूनियत का रंग ले लिया तो फिर मामला बिगड़ जाएगा। मुसलमानों को इस विवाद से अलग थलग रखने की इसराईली कोशिश के बावजूद दुनिया भर के मुसलमानों में इस्राईल के ख़िलाफ़ बहुत बेचैनी पैदा हुई है। अब तक इस्राईल की सरकार की एक ही कोशिश रही है कि इलाक़े में शांति भी क़ायम हो जाए और फिलिस्तीनियों को उनके अधिकार भी न देने पड़ें। इस्राईल की इसी कोशिश की वजह से पश्चिम एशिया में आज तक अमन क़ायम नहीं हो सका। फिलिस्तीनी मुसलमानों का संघर्ष रोज़ बरोज़ तेज़ होता गया। लबनान में अपनी फ़ौज उतारने की सज़ा में इस्राईल को हिज़्ब उल्लाह के रूप में एक अन्य मुस्लिम संगठन से दो बार पराजय का मुँह देखना पड़ा। इसी के साथ फ़िलिस्तीन का वह आंदोलन जो अब तक देश के नाम पर जारी था, हमास के रूप में इस्लामी ध्वज के

साये में आ गया। इस क्षेत्र में इस्लाम के प्रभाव को लगातार बढ़ते देख कर इस्राईल के राजनीतिज्ञ बहुत चिंतित हैं उनको लगता है कि अगर मुसलमान इसी प्रकार एकता के सूत्र में बँधते रहे तो इस्राईल का अस्तित्व ही ख़त्म हो जाएगा। इसी ख़तरे को ध्यान में रखते हुए इस्राईल के विभिन्न संगठन इस बात की कोशिश कर रहे हैं कि यहूदियों और मुसलमानों को क़रीब किया जाए और किसी तरह से मामले को हल किया जाए। इसी वजह से अमरीका में बसने वाले यहूदियों के एक संगठन अमरीकन ज्युईश कमेटी और ऑस्ट्रेलिया के यहूदी संगठन ऑस्ट्रेलिया इस्राईल ज्युईश एफ़ियर्ज़ ने प्रोजेक्ट इंटर चेन्ज के अंतर्गत के तहत भारत से कुछ मुसलमानों को बुलाया ताकि वह लोग शांति के लिए कुछ रास्ते तलाश करें। इसी प्रतिनिधि मंडल के साथ जाने के लिए रोज़नामा राष्ट्रीय सहारा की तरफ़ से मुझे जाने के लिए कहा गया। अगस्त के दूसरे सप्ताह में उर्दू के ग्रुप संपादक जनाब अज़ीज़ बरनी साहब ने मुझ से कहा कि भारत से एक प्रतिनिधि मंडल शांति का संदेश ले कर एक दो दिन में इस्राईल जाने वाला है आप को इस प्रतिनिधि मंडल के साथ सहारा के प्रतिनिधि के रूप में जाना है। मुझे एक ऐसे मुल्क में जाने के लिए कहा गया था जिस के लिए मेरे मन में बचपन से नफ़रत के सिवा कुछ नहीं था। इस्राईल मेरी नज़र में हमेशा से एक ज़ालिम, अत्याचारी, क्रूर और दमनकारी राष्ट्र था। मैं उलझन में पड़ गया। सोचने लगा जाऊँ कि न जाऊँ? कोई निर्णय लेना मुश्किल था। एक तरफ़ तो इस्राईल के कब्जे वाले फिलिस्तीनी शहरों यरोशलम, रमल्ला, हैफ़ा, और ग़ज़्ज़ा देखने का शौक़ था तो दूसरी तरफ़ इस्राईल जैसे दमनकारी मुल्क में जाना मेरी अपनी ही नज़र में गुनाह था। इसी कशमकश में उलझा था कि मेरे दोस्तों और रिश्तेदारों ने इस उलझन को और अधिक बढ़ाना शुरू कर दिया। मेरे भाँजे आकिफ़

ज़ैदी ने ईरान से मेल किया कि मैं किसी क़ीमत पर इस्राईल न जाऊँ अनेक दोस्त भी मना करने लगे। एक तरफ़ पत्रकारिता का पेशा था जो मुझ से कह रहा था कि मुझे जाना चाहिए और दूसरी तरफ़ समाजी दबाव था जो मुझे इस्राईल जाने से रोक रहा था। मेरे मन में चल रही लड़ाई के दौरान ही अंदर से आवाज़ आई कि फ़िलिस्तीन की मज़्लूम जनता पर तोड़े जा रहे अत्याचार देखने का इस से बेहतरीन मौक़ा कभी नहीं मिलेगा क्योंकि एक पत्रकार के जीवन में ऐसे अहम मौक़े बहुत कम आते हैं जब वह किसी बड़े मामले का चश्मदीद गवाह बन जाता है। फिर मेरे मन में विचार आया कि मैं दो बार अमरीका भी तो जा चुका हूँ वह तो इस्राईल से भी बड़ा अत्याचारी और दमनकारी देश है, अमरीका से लौटने के बाद भी मैं ने अपने क़लम को आज़ाद ही रखा तो फिर इस्राईल जाने में इतनी झिझक क्यों? मुझे उलझन और कशमकश में घिरा देख कर जनाब अज़ीज़ बरनी ने मुझे बुलाया और कहा कि "अगर आप इस्राईल जाने से घबरा रहे हों तो आप इन्कार भी कर सकते हैं फ़ैसला आपके हाथ में हैं लेकिन मेरे ख़्याल में प्रतिनिधि मंडल के साथ एक व्यक्ति तो ऐसा जाना चाहिए जिस में सच लिखने की हिम्मत हो और जिसके दिल में मुसलमानों का दर्द हो।" उनकी बात सुन कर मुझे एक नई ताक़त मिली और मैं ने सोचा कि मुझे तो सिर्फ़ अपने अल्लाह, पैग़ंबर हज़रत मोहम्मदस०, उनके परिवार जनों और अपने जमीर को ही जवाब देना है तो फिर इतना परेशान क्यों हूँ? जिस कर्तव्य के निर्वाह के लिए मुझे मेरा दफ़्तर भेज रहा है मैं उसे पूरी ईमानदारी से निभाऊँ और फ़िलिस्तीन की जनता के दुख दर्द कि सच्ची तस्वीर पेश करूँ बस मेरा यही दायित्व है। मेरी इसी सोच ने मेरी तमाम उलझनें ख़त्म कर दीं और मैं इस्राईल जाने के लिए तैयार हो गया।

दौरे की शुरुआत

13 अगस्त 2007 को मैंने सुबह को वीज़े का फ़ार्म भर कर इस्राईल के दूतावास में जमा किया और शाम को मुझे वीज़ा मिल गया। दूसरे दिन तीन बजे शाम को मैं दिल्ली के इंदिरा गाँधी अंतर्राष्ट्रीय हवाई अड्डे पर पहुँचा तो वहाँ छः लोगों से मुलाक़ात हुई। इत्तिफ़ाक़ से मैं इन में से किसी से भी परिचित नहीं था। वहीं पर मेरा सब से परिचय हुआ तो मालूम पड़ा कि इनमें से लंबी सी शेरवानी और ऊँची सी टोपी पहने हुए जो साहब है वह हज़रत निज़ाम-ऊद-दीन की दरगाह से जुड़े हैं और उनका नाम मौलाना अफ़ज़ाल निज़ामी है। दूसरे साहब मौलाना जमील इल्यासी के बेटे मौलाना उमैर इल्यासी थे। हरे रंग की पगड़ी बाँधे तीसरे साहब मेरठ के मौलाना हिफ़्ज़-उर-रहमान थे। प्रतिनिधि मंडल के चौथे सदस्य थे ख़्वाजा ईफ़्तिख़ार साहब। इन लोगों के अलावा यू एन आई के प्रतिनिधि शेख़ मंज़ूर और पी टी आई के नुमाइंदे ज़ीशान हैदर भी मौजूद थे। छोटे से परिचय के बाद हम लोग शाम चार बजे एयर इंडिया की उड़ान से मुम्बई के लिए रवाना हुए और छै बजे मुम्बई पहुँच गए। वहाँ हमारे स्वागत के लिए अमरीकन ज्युईश कमेटी की प्रतिनिधि प्रिया टंडन मौजूद थीं। प्रिया को देख कर लगा कि मैं इन से पहले भी कहीं मिला हूँ तो उन्होंने याद दिलवाया कि वह प्रधान मंत्री की अमरीका यात्रा के दौरान मुझे New York में मिलीं थीं।

इस्राईल की उड़ान रात ग्यारह बजे की थी। प्रतिनिधि मंडल की इसराईली सुरक्षा अधिकारियों ने बहुत ही कड़ी जाँच की और बहुत ही तीखे सवालात किए। कुछ लोगों से तो आधे आधे घंटे तक पूछताछ की गई और आधुनिक सुरक्षा उपकरणों से सामान की जाँच की गई। सुरक्षा अधिकारियों के इस तरह के बर्ताव को देख

कर यह बात मेरी समझ में आ गई कि भारत से जाने वाले इस दल की कोई सरकारी हैसियत नहीं है। सुरक्षा जाँच की प्रक्रिया तीन घंटे में पूरी हुई। हम को इसराईली एयर लाइन ELAL की उड़ान से रात ग्यारह बजे तलअबीब के लिए रवाना होना था। हम लोग Waiting Lounge में बैठ गए इसी बीच मेरे ममेरे भाई और शिया धर्मगुरु मौलाना सय्यद कल्बे जवाद का फ़ोन आया और उन्होंने मुझ से कहा कि इस्राईल जाना उचित नहीं है। मैंने उनको समझाते हुए कहा कि मैं एक पत्रकार हूँ और पत्रकार को कहीं भी जाना पड़ सकता इस लिए इस्राईल जाने से परेशान होने की ज़रूरत नहीं मैं वहाँ से लौट कर सच ही लिखूँगा।

रात साढ़े ग्यारह बजे हम लोग ELAL की उड़ान नंबर 72 से रवाना हुए और साढ़े सात घंटे की यात्रा के बाद इस्राईल के समय के अनुसार सुबह साढ़े चार बजे (भारत और इस्राईल के समय में ढाई घंटे का अंतर है) तलअबीब के बिन ग़ुरियान हवाई अड्डे पर उतरे। यहाँ भी इस्राईल की सुरक्षा एजेंसियों ने प्रतिनिधि मंडल को आसानी से नहीं छोड़ा और ख़्वाजा इफ़्तेख़ार साहब और पी टी आई के पत्रकार ज़ीशान हैदर से बहुत देर तक पूछताछ की। जिस की वजह से इन दोनों को काफ़ी तकलीफ़ हुई। इसी कारण हम लोगों को हवाई अड्डे से निकलते निकलते छै बज गए।

हवाई अड्डे के बाहर माया ट्रांस्पोर्ट की एक मिनी बस मौजूद थी जिस में एक यहूदी गाइड राबिन्सन सोलोमन और अशअर नाम का एक इसराईली ड्राइवर मौजूद था। हवाई अड्डे से हम लोगों को तलअबीब के एक मुस्लिम इलाक़े में स्थित जोअफ़ा नाम की अरब बस्ती में ले जाया गया। यहाँ कई अरब पुरुष और महिलाएँ अपने परंपरागत लिबास में दिखाई पड़ रहे थे। कुछ मस्जिदें भी रास्ते में दिखाई पड़ीं। जोअफ़ा क्षेत्र में दुकानों पर अरबी में लिखे साइनबोर्ड नज़र आ रहे थे। हम लोगों को दो तीन घंटे आराम

करने के लिए जोअफ़ा के Ruth Denial Guest House में ठहराया गया। यहाँ हम लोगों ने चाय इत्यादि पी और दो घंटे आराम करने के बाद हम लोग अपने देश की आज़ादी के जश्न में शामिल होने के लिए तलअबीब के भारतीय दूतावास की तरफ़ रवाना हो गए। रास्ते में हमारे गाइड सोलोमन ने बताया कि जोअफ़ा में यहूदी और मुसलमान मिल कर रहते हैं और दोनों वर्गों में कोई तनाव नहीं है। गाइड ने बताया कि इस्राईल 470 किलो मीटर की लंबाई में फैला हुआ देश है। जिस में कुल 70 लाख लोग रहते हैं कुल जनसंख्या का 80% यहूदी हैं, बाक़ी के 20% लोगों में 17% मुसलमान हैं, 2% ईसाई हैं और बाक़ी की 1% आबादी में दरूज़ व अन्य अल्प संख्यक हैं। भारतीय दूतावास जाते वक़्त रास्ते में एक शानदार मस्जिद दिखाई पड़ी तो गाइड ने बताया कि यह तलअबीब की मशहूर सुलेमानी मस्जिद है और यही इस नगर की वह अकेली मस्जिद है जहाँ पाँचों वक़्त मुसलमान नमाज़ पढ़ने के लिए आते हैं।

तलअबीब में हर तरफ़ भवन निर्माण का कार्य होते हुए देखा जा सकता है। चारों ओर नए नए मकान बन रहें हैं ताकि दूसरे देशों से आकर इस्राईल में बसने वाले यहूदियों को आरामदेह घर दिए जा सकें। यहाँ बसने वाले यहूदियों को बैंकों से बहुत ही आसान शर्तों पर कर्ज़ मिल जाता है। इसी कारण इस्राईल में रहने वाला कोई यहूदी किराए के मकान में नहीं रहता। हर एक का अपना निजी मकान होता है। सिर्फ़ मुसलमानों और ईसाइयों को यहाँ किराए के मकान में जीवन गुज़ारना पड़ता है। इस से पहले भवन निर्माण का काम इतने बड़े पैमाने पर मैंने तो कहीं होते नहीं देखा था। हमारे गाइड ने कहा कि आप को मालूम है इस्राईल का राष्ट्रीय पक्षी कौन सा है? मैंने कहा नहीं मालूम तो उस ने ऊँची ऊँची बिल्डिंगों के निर्माण कार्य में लगी हुई Builder's Crane

को दिखाते हुए कहा कि यही हमारा राष्ट्रीय परिंदा है।
इस्राईल की पुरानी राजधानी तलअबीब के विभिन्न मोहल्लों से होते हुए हम लोग 9 बजे भारतीय दूतावास पहुँच गए। यहाँ रंगबिरंगी पोशाकों में बहुत से भारतीय ध्वजारोहण समारोह में भाग लेने के लिए मौजूद थे। इस्राईल में तैनात भारत के राजदूत श्री अरुण कुमार सिंह ने सब लोगों का स्वागत करते हुए कहा कि आज हम भारत की आज़ादी की 60 वीं और आज़ादी के प्रथम युद्ध की 150 वीं वर्षगाँठ मना रहे हैं। उन्होंने यह भी कहा कि सोलह वर्ष पूर्व आज ही के दिन भारत और इस्राईल के बीच संबंध क़ायम हुए थे उस की भी आज हम सालगिरह माना रहे हैं। राजदूत के भाषण के बाद कई भारतीय कलाकारों ने अनेक प्रकार के नृत्य पेश किए। इस अवसर पर भारतीय पकवानों का भी प्रबंध था जिस में सभी भारतीय दिलचस्पी दिखा रहे थे।
इस पार्टी में मौजूद कुछ भारतीय मूल के यहूदियों से मुझे बात करने का अवसर मिला तो उनके लहज़े में एक दर्द छुपा हुआ नज़र आया। उन यहूदियों में से एक ने बहुत साफ़गोई से काम लेते हुए कहा कि हम को भारत छोड़ कर इस्राईल में बसने के लिए हज़ार तरह से प्रेरित किया गया, तरह तरह की लालच दी गई थी जब हम यहाँ आ कर बस गए तो अब हम को जाति भेद और रंग भेद का सामना करना पड़ रहा है। यहाँ हम सातवें दर्जे के शहरी बन गए हैं। रूस से जो यहूदी यहाँ आए हैं वह अव्वल दर्जे के शहरी हैं। उस भारतीय यहूदी ने कहा कि हम जिस को अपनी खोई हुई जन्नत समझ कर आए थे वह हमारे लिए नरक बन गया है।
इस्राईल में भारतीय मूल के 70 हज़ार लोग रहते हैं। इनमें से अधिकतर महाराष्ट्र, बंगाल और केरल के रहने वाले हैं।

यरोशलम को सलाम

तलअबीब स्थित भारतीय दूतावास से हमारी बस 11 बजे दिन में यरोशलम के लिए रवाना हुई। हमारी मिनी बस ने रोम सागर के किनारे किनारे अपनी यात्रा शुरू की। सागर तट पर इसराईली युवक-युवतियों के झुंड के झुंड अश्लील लिबास में लेटे धूप का मज़ा ले रहे थे।

हमारी बस एक घंटे के सफ़र के बाद यरोशलम में दाख़िल हो गई। सारा यरोशलम छोटी बड़ी पहाड़ियों पर बसा हुआ है। कहीं भी कोई मैदानी इलाक़ा नज़र नहीं आ रहा था। घुमावदार पहाड़ी रास्ते, ख़ूबसूरत घाटियाँ, मोरपंखी के ऊँचे ऊँचे दरख़्त और हरे रंग के पेड़ों से ढके पहाड़ बहुत ही हसीन लग रहे थे। नगर के सारे मकान और भवन क्रीम कलर के नज़र आ रहे थे। ऐसा लगता था कोई कि जैसे कोई पेंटर रंग से भरी बाल्टी शहर पर उँडेल कर चला गया हो। मैंने अपने गाइड सोलोमन से यरोशलम के तमाम घर और भवन क्रीम कलर के होने की वजह पूछी तो वह कोई ख़ास तर्क नहीं दे सका। वह हमको केवल इतना ही बता सका कि यरोशलम में शताब्दियों से यही परंपरा रही है कि सारे भवन क्रीम कलर के पत्थर से ही बनाए जाएँ जिसको यहाँ के वासी यरोशलम स्टोन कहते हैं। (अरबी भाषा में इस पत्थर को हजर मालिकी कहा जाता है) यहाँ की दीवारों को किसी प्रकार के रंग से रंगना बुरा समझा जाता है। 1918 में यहाँ के अँग्रेज़ गवर्नर Ronald Storrs ने एक हुक्म जारी करके इस बात को सुनिश्चित किया था कि किसी भी मकान का बाहरी भाग यरोशलम स्टोन के अलावा किसी चीज़ से नहीं बनाया जा सकता।

थोड़ी देर ऊँचे नीचे रास्तों से गुज़रते हुए हम लोग वहाँ के मशहूर होटल यरोशलम रीजेन्सी में पहुँच गए। मुझे 720 नंबर कमरा

मिला। कमरे में पहुँचने के बाद मैंने जैसे ही खिड़की का पर्दा हटाया तो ख़ुशी से मेरी आँखें फटी रह गई। मेरे सामने वह सुनहरी गुंबद मौजूद था जिस की तस्वीर मैं बचपन से देखता आया था। मेरी आँखों में आँसू आ गए।

मस्जिद-ए-अक़्सा पे पड़ते ही नज़र
दिल मेरा आँखों में खिंच कर आ गया

खिड़की का दरवाज़ा खोल कर बालकनी की छत पर जाया सकता था। मैंने बिजली की रफ़्तार से दरवाज़ा खोला और छत पर पहुँच कर देर तक मस्जिद-ए-अक़्सा को देखता रहा। फिर मैं जल्दी जल्दी तैयार हुआ और होटल की लॉबी में आया। लॉबी में यहूदियों के एक धर्मगुरु रब्बाई डेविड रोज़न भारतीय प्रतिनिधि मंडल की प्रतीक्षा कर रहे थे। डेविड रोज़न अमरीकन ज्युईश कमेटी के सर्वधर्म मामलों के अंतर्राष्ट्रीय निदेशक हैं। उन्होंने प्रतिनिधि मंडल का स्वागत किया और शांति के प्रति इसराईली जनता की वचनबद्धता को दोहराया। उन्होंने कहा कि इस्राईल की जनता चाहती है कि अब मुसलमानों के साथ ठोस वार्ता के दरवाज़े खोले जाएँ। इस क्षेत्र को अब एक लंबी शांति प्रक्रिया की आवश्यकता है। डेविड रोज़न ने कहा कि अगर अब भी शांति स्थापित नहीं हुई तो दुनिया को एक बड़े विनाशकारी युद्ध का सामना करना पड़ सकता है। रब्बाई रोज़न ने यह भी कहा कि इस्राईल के यहूदी अब अमन चाहते हैं और अगर मुसलमान भी दो राष्ट्रों (इस्राईल व फ़िलिस्तीन) की स्थापना की बात मान लें तो इस्राईल भी अपनी पॉलिसी में परिवर्तन ला सकता है। पहली बार किसी इसराईली के मुँह से शांति की बात सुन कर मुझे बहुत ताज्जुब हुआ वर्ना इसराईली तो हमेशा ताक़त के नशे में डूबी हुई आवाज़ में बात करते रहे हैं। लहज़े में यह परिवर्तन कैसे आया यह समझना आसान था लेकिन चूँकि डेविड रोज़न धर्मगुरु थे इस

लिए मैं ने उनसे कोई प्रश्न करना उचित नहीं समझा और ख़ामोशी से उनकी बात सुनता रहा। वैसे भी मेरा ध्यान केवल एक ही तरफ़ था और मैं लगातार सोचे जा रहा था कि किस वक़्त डेविड रोज़न अपनी बात ख़त्म करें और हम लोग मस्जिद-ए-अक़्सा के लिए चल पड़ें।

डेविड रोज़न के साथ मीटिंग ख़त्म होने के बाद हमारे गाइड सोलोमन ने कहा कि आप लोग पहले थोड़ी देर आराम कर लें फिर शाम को मस्जिद-ए-अक़्सा चलेंगें लेकिन प्रतिनिधि मंडल के सभी लोग इस बात की ज़िद करने लगे कि आराम करने के बजाए हम लोग अभी मस्जिद-ए-अक़्सा में नमाज़ पढ़ने के लिए जाएँगे। सब लोग जल्दी से बस में बैठे और बस मस्जिद-ए-अक़्सा के लिए चल पड़ी। रास्ते में दो तरह का यरोशलम मिला। पश्चिमी यरोशलम से गुज़रते समय यह लग रहा था कि हम अमरीका या इंग्लैंड के किसी क्षेत्र से गुज़र रहे हों। हर तरफ़ कम कपड़ों में ढकी औरतें अपने शरीर की नुमाइश करती नज़र आ रहीं थीं लेकिन जैसे जैसे हम लोग मस्जिद की तरफ़ बढ़ते गए कट्टर यहूदी बड़ी तादाद में दिखाई देने लगे। यह लोग अपने पवित्र स्थल दीवारे गिरया (आँसू बहाने वालों के लिए विशेष स्थान) की ओर जा रहे थे। इनमें से सभी ने काले कोट, काली पैंट, काली हैट, काली बो लगा रखी थी और सफ़ेद शर्ट पहन रखी थी। कुछ ने लंबी लंबी दाढ़ियाँ और बड़ी बड़ी क़लमें रखी हुई थीं। जो लोग कम कट्टर थे उन्होंने एक पतली सी टोपी अपने सिर पर किलिप की मदद से चिपका रखी थी।

हम लोग पश्चिमी शहर के कई इलाक़ों से होते हुए मस्जिद-ए-अक़्सा के पीछे वाली पहाड़ी पर बस से उतरे। उस के बाद सिक्योरिटी के कड़े घेरे को पार करने के लिए हम लोगों को एक्स-रे मशीनों से गुज़रना पड़ा। यहाँ पर हम लोगों को अपने

गाइड सोलोमन की मेहरबानी से इतनी सहूलत मिल गई कि हम को सुरक्षा जाँच के लिए लगी लंबी लाइन से नहीं गुज़रना पड़ा। हम लोग सुरक्षा जाँच के बाद दीवारें गिरया तक पहुँचे। यह दीवार मस्जिद-ए-अक़्सा के ठीक नीचे है इसे यहूदी अपना सब से पवित्र धर्मस्थल बताते हैं। इस दीवार के आस पास हज़ारों यहूदी मौजूद थे जो अपने हाथों में अपनी पवित्र किताब तौरैत पढ़ रहे थे। किताब पढ़ने के दौरान सभी यहूदी तेज़ तेज़ हिल भी रहे थे। (इनको हिलते देख कर मुझे भारतीय मदरसों के वह बच्चे याद आये जो सबक़ याद करते हुए ज़ोर ज़ोर से हिलते रहते हैं।) अनेक यहूदी पुरुष और महिलाएँ कुछ पढ़ कर आँसू भी बहा रहे थे। हमारे यहूदी गाइड ने हम को बताया कि एक युग में इसी जगह पर (जहाँ आज मस्जिद-ए-अक़्सा है) यहूदियों का सब से पवित्र धर्मस्थल Temple Mount स्थित था जिसको रोम की सेनाओं ने बरबाद कर दिया था उसी की याद में यहाँ यहूदी आकर आँसू बहाते हैं। हालाँकि ईन्जील के हवालों से यह बात साबित नहीं होती कि कभी इसी जगह पर यहूदी मंदिर था। इन्जील के अनुसार यहूदियों का पवित्र तम मंदिर जबल-ए-सहयून पर स्थित था। जिस को ईसा पूर्व में सिकंदरे आज़म के वंशजों ने इस मंदिर को ध्वस्त कर दिया था। मुसलमानों का भी यही मानना है कि इस जगह पर कोई यहूदी मंदिर कभी था ही नहीं बल्कि हज़रत इब्राहीम की बनवाई हुई वह मस्जिद थी जिस को उन्होंने पवित्र काबा का निर्माण करने के चार साल बाद बनाया था। दीवारे गिरया के ऊपर ही एक दरवाज़ा भी बना है इस को पश्चिमी द्वार कहा जाता है। इस द्वार से भी मस्जिद के अंदर पहुँचा जा सकता है। इस द्वार तक पहुँचने के लिए इस्राईल की सरकार ने लकड़ी का एक पुल बना रखा है। जिसके द्वारा एक निर्धारित समय पर यहूदी लोग मस्जिद के आँगन में दाख़िल होते

है और दूसरे दरवाज़े से निकल जाते हैं। इसी लकड़ी के पुल को गिरा कर इस्राईल की सरकार यहाँ पर एक फ़्लाई ओवर बनाना चाहती थी मगर मुसलमानों के कड़े विरोध और कुर्बानियों की वजह से इस्राईल की सरकार अपनी योजना में सफल नहीं हो सकी। हम लोग अपने गाइड की मदद से दीवारे गिरया के बिल्कुल निकट पहुँच गए और वहाँ यहूदियों की पूजा अर्चना के तौर तरीक़ों को क़रीब से देखा। हम ने देखा कि दीवारे गिरया के पत्थरों के बीच जो दीवारें थीं उनमें हज़ारों पर्चियाँ ठूँस कर रखी गई थीं हमने जब इन पर्चियों के बारे में सोलोमन से पूछा तो उसने बताया कि इन पर्चियों में यहूदियों ने मन्नतें और मनोकामनाएँ लिख कर ख़ुदा तक पहुँचाने की कोशिश की है।

दीवारे गिरया के आस पास कुछ समय गुज़ार कर हम लोग उत्तर की तरफ़ पहाड़ की चढ़ाई पर चढ़े और थोड़ी दूर चढ़ने के बाद एक पतली सी गली में पहुँच गए। इस गली तक आने में भी हम लोगों को इस्राईल की सुरक्षा चौकी से गुज़रना पड़ा। इस गली में आगे बढ़ते ही मुस्लिम तहज़ीब के बीच पहुँच गए। यहाँ हर तरफ़ सिर पर स्कार्फ़ बाँधे महिलाएँ, लंबे लंबे कुर्ते (जिनको सौब कहा जाता है) पहने नूरानी चेहरों वाले बुज़ुर्ग, टी शर्ट और जीन्स पहने नवजवान फिलिस्तीनी लड़के और छोटे छोटे ख़ूबसूरत अरब बच्चे हर तरफ़ नज़र आ रहे थे। कहीं कबाब के स्टाल थे तो कहीं तस्बीह (विशेष इस्लामी माला) और जानमाज़ (नमाज़ पढ़ने के लिए बिछाया जाने वाला छोटा सा विशेष वस्त्र) बेचने वालों की दुकानें थीं। अरबी बरतन, सजावट का सामान, छोटे बड़े फ़ोटो फ़्रेम, तरह तरह के गिफ़्ट आइटम, हुक़्क़े, शीशे का सामान, इत्र (सुगंध) और वस्त्र बेचने वालों की कई दुकानें थीं। गली की दीवारों के साथ साथ रास्ते का फ़र्श भी यरोशलम स्टोन से ही निर्मित था। दो तहज़ीबों के बीच का टकराव और फ़र्क़ यहाँ

बिल्कुल साफ़ तौर पर नज़र आ रहा था। यहूदियों के क्षेत्रों में दुकानों पर काफ़ी भीड़ थी जब कि मुसलमानों के इलाक़े में ख़रीददारों का कोई अता-पता नहीं था। इस की एक वजह यह है कि इस्राईल के यहूदी इलाक़ों टूरिस्ट बहुत बड़ी संख्या में आते हैं लेकिन मुसलमानों के इलाक़े में कोई मुस्लिम टूरिस्ट नहीं आता। इन दुकानों से सिर्फ़ स्थानीय मुसलमान ही अपनी ज़रूरत का सामान ख़रीदते हैं। हम इस गली से होते हुए मस्जिद-ए-अक़्सा के पास पहुँच गए। मस्जिद से कुछ पहले इसराईली सेना की एक और चौकी मिली यहाँ तैनात सैनिकों ने हम सब के पासपोर्ट चेक किए। मस्जिद-ए-अक़्सा में मुसलमानों के अलावा किसी दूसरे धर्म के लोगों को प्रवेश करने की इजाज़त नहीं है (सिर्फ़ यहूदी लोग पश्चिमी द्वार से एक निर्धारित समय में अंदर आते हैं और दूसरे द्वार से बाहर चले जाते हैं) इस लिए हमारे पासपोर्ट पर लिखे हमारे नामों से यह अंदाज़ा लगाया गया कि हम लोग मुसलमान हैं अतः हम लोगों को मस्जिद में प्रवेश की अनुमति मिल गई लेकिन प्रिया टंडन और सोलोमन को मस्जिद के दरवाज़े पर ही रोक दिया गया। प्रतिनिधि मंडल के सदस्य बाब-उल-क़तानीन अर्थात रुई बेचने वालों का द्वार कहे जाने वाले दरवाज़े से मस्जिद में दाख़िल हुए (हालाँकि अब वहाँ रुई बेचने वालों की कोई दुकान नहीं है।) मस्जिद-ए-अक़्सा के दो हिस्से हैं एक में तो हज़रत इब्राहीम की बनवाई हुई हज़ारों वर्ष पुराने प्रार्थना स्थल की दीवारें हैं जिस को बैत-उल-मुक़दद्स यानी पवित्र घर और मस्जिद-ए-अक़्सा कहा जाता है। हज़ारों साल पुरानी इन्हीं बुनियादों पर अब वह मस्जिद स्थित है जो मुस्लिम शासक सलाह-ऊद-दीन अय्यूबी ने बनवाई थी। जिस द्वार से हम लोग मस्जिद के अंदर गए थे उस के ठीक सामने मस्जिद का दूसरा हिस्सा है जिस को कुब्-बतुस्सख़रा (Dome of the Rock) कहा

जाता है। यही वह स्थान है जहाँ पैग़ंबर हज़रत मोहम्मद मेराज की रात में कुछ देर के लिए ठहरे थे। इन दोनों भवनों के बीच एक विशाल मैदान है जिस में मोर पंखी के ऊँचे ऊँचे पेड़ लगे हैं मैंने अपने जीवन में इससे पहले कभी इतनी ऊँची मोर पंखी नहीं देखी थी। मस्जिद के चारों तरफ़ अबाबील नामी परिंदे के झुंड चक्कर लगा रहे थे। (इन परिंदों का इस्लामी इतिहास में बहुत महत्व है। मुसलमानों का मानना है कि जब पवित्र काबा पर अबरहा नाम के एक क्रूर शासक ने हमला किया तो इन्हीं छोटे छोटे परिंदों को अल्लाह ने मदद के लिए भेजा और अबरहा की फ़ौज ध्वस्त हो गई) इन परिंदों को देख कर मुझे लगा कि यह बे-जुबान पक्षी अपनी भाषा में मुसलमानों को दिलासा दिलवा रहे हैं कि घबराओ नहीं जब कोई दुष्ट शासक इधर का रुख़ करेगा तो हम अल्लाह के हुक्म से इस मस्जिद को बचाएँगे।

हम सब ने जल्दी जल्दी वजू किया (नमाज़ के लिए हाथ मुँह धोए) और जल्दी जल्दी मस्जिद के अंदर पहुँच गए। भारतीय प्रतिनिधि मंडल में तीन लोग ऐसे थे जिनकी शक्ल उलेमा की जैसी थी लेकिन दिलचस्प बात तो यह थी कि किसी को यह नहीं मालूम था कि यात्रा के दौरान किस प्रकार की नमाज़ अदा की जाती है (यात्रा के दौरान दोपहर तीसरे पहर और रात्रि की नमाज़ घट कर आधी रह जाती है।) एक मौलाना इमाम बन कर खड़े हुए तो उन्होंने पूरी नमाज़ पढ़ा दी। जब हम लोगों ने इस मामले को उठाया तो दूसरे मौलाना ने आधी नमाज़ पढ़ाई लेकिन मैंने उनकी इमामत (नेतृत्व) में नमाज़ पढ़ने के बजाए अकेले नमाज़ पढ़ी। नमाज़ के बाद हम लोग कुब्-बतुस्सख़रा के अंदर गए। इस पहाड़ी चट्टान के ऊपर एक बहुत ही सुंदर भवन बना दिया गया है जिस पर एक सुनहरी गुंबद है जो यरोशलम में दूर दूर से दिखाई पड़ता है। । जब हम इस इमारत में दाख़िल हुए तो सब

से पहले वह चट्टान दिखाई पड़ी जहाँ हज़रत मोहम्मद ने बुराक़ यानी अपना विशेष वाहन ठहराया था। इस चट्टान पर एक सुनहरी रंग का केस बना दिया गया है। चट्टान को छूने के लिए इस केस में थोड़ी सी जगह छोड़ दी गई है। मैं ने इस चट्टान को छुआ तो ऐसा लगा कि रोम रोम में अक़ीदत की लहर दौड़ गई । इस चट्टान के ठीक नीचे वह ग़ार (गुफा) है जिसमें पैग़ंबर साहब ने मेराज की रात में नमाज़ पढ़ी थी। इस गुफा में बड़ा रूहानी दृश्य था हर तरफ़ औरतें व बच्चे पवित्र क़ुरआन पढ़ने में व्यस्त थे कुछ बुज़ुर्ग व जवान नमाज़ में मसरूफ़ थे। यहाँ अल्लाह हो अकबर की आवाज़ के अलावा कोई आवाज़ सुनाई नहीं पड़ रही थीं ।

घायल साँप से भेंट

शाम को प्रतिनिधि मंडल के लोगों को Canella Restaurant में एक महत्वपूर्ण इसराईली अधिकारी से मिलने के लिए ले जाया गया। इस अधिकारी का नाम एरान लरमैन था। यह अधिकारी कुछ वर्षों पूर्व इस्राईल की गुप्तचर एजेंसी मूसाड का एक बड़ा अधिकारी था। इसराईली फ़ौज के गुप्तचर विभाग में भी एरान लरमैन एक बड़े पद पर काम कर चुका था। यह भी हम को बताया गया कि हिज़्ब उल्लाह और इस्राईल के बीच युद्ध के दौरान एरान ही इस्राईल की फ़ौज की रणनीति तैयार कर रहा था।

एरान ने अपनी बातचीत की शुरुआत बहुत दिलचस्प अन्दाज़ में की। उसने कहा कि असल में मुसलमानों की तमाम परेशानियाँ इसलिए हैं कि ख़िलाफ़त उसमानिया समाप्त हो गई और इसी के साथ इस्लामी सियासत का ख़ातिमा भी हो गया। इसी कारण हसन उल बना और शहीद कुतुब जैसे उग्रवादी जेहनीयत रखने वाले लोगों की तादाद बढ़ने लगी(हालाँकि हसन उल बना और शहीद कुतुब इस्लामी उग्रवादी नहीं थे बल्कि मुसलमानों को संगठित करना चाहते थे और पश्चिमी देशों की साज़िशों से उनको आगाह करना चाहते थे।) लरमैन ने आगे कहा कि तुर्की की उसमानी ख़िलाफ़त ख़त्म होने के कारण ईरान जैसे देशों को इस्लामी राजनीति में दाख़िल होने का मौक़ा मिल गया। ईरान ने इस्लाम को बहुत नुकसान पहुँचाया है और अब हिज़्ब उल्लाह इस्लामी आदर्शों को नुकसान पहुँचा रहे है। एरान लरमैन के मुँह से इस्लाम की हमदर्दी में निकलने वाले शब्दों से मेरे दिल में एक तूफ़ान उठ रहा था। मुझे लग रहा था कि हिज़्ब उल्लाह के साथ लड़ाई में जो साँप घायल हो गया था वह दर्द से तड़प रहा है

वर्ना एक यहूदी के मुँह से इस्लाम की हमदर्दी का क्या अर्थ हो सकता है? एरान ने कहा कि अब अरब और इस्राईल विवाद का युग ख़त्म हो गया है अब तो लड़ाई ईरान और इस्राईल के बीच है। उस ने इल्ज़ाम लगाते हुए कहा कि ईरान हिज़्ब उल्लाह की मदद कर रहा है इस लिए क्षेत्र में हालात ख़राब हो रहे हैं। इस बात पर मैं चुप नहीं रह सका और मैंने उसको टोकते हुए कहा कि दक्षिणी लबनान में रह रहे फिलिस्तीनी शरणार्थियों को वहाँ से खदेड़ने के लिए इस्राईल ने जो फ़ौजी हमला किया था उस के लिए क्या आप को हिज़्ब उल्लाह ने मजबूर किया था? इस सवाल पर एरान बग़लें झाँकने लगा और कोई जवाब नहीं दे सका। मैंने दूसरा सवाल दाग़ते हुए कहा कि लबनान से फिलिस्तीनियों को खदेड़ने के बाद दक्षिणी लबनान पर क़ब्ज़ा कर के वहाँ अपनी सेना बिठाए रखने पर क्या आप को हिज़्ब उल्लाह ने मजबूर किया था? या आपकी सेनाओं के लगातार कब्जे से तंग आकर हिज़्ब उल्लाह ने आप के विरुद्ध मोर्चा खोला था? तो इस सवाल पर एरान लरमैन ने कहा कि इस मामले में इस्राईल से ग़लती हुई थी असल में हमारे ईसाई भाइयों ने हम से निवेदन किया था कि हम दक्षिणी लबनान में ही रुक जाएँ यही फ़ैसला हम को महँगा पड़ा। एरान लरमैन ने आगे कहा कि असल में सारे झगड़े की जड़ शिया हैं और वही पश्चिमी एशिया का माहौल बिगाड़ रहे हैं। जब मैं ने एरान लरमैन को टोकते हुए फिर कहा कि क्या फिलिस्तीनी संगठन हमास और लबनान के मुस्लिम संगठन फ़तह उल इस्लाम के क्रांतिकारी योद्धा भी शिया हैं? तो वह बोला कि नहीं वह लोग शिया तो नहीं हैं लेकिन शिया उनकी मदद कर रहे हैं। लरमैन ने प्रतिनिधि मंडल का ध्यान भटकाते हुए कहा कि आप तो जानते ही हैं कि आप के मुल्क के लखनऊ शहर में भी शिया सुन्नी दंगा होता है जिस की वजह वहाँ ईरान का बढ़ता हुआ

प्रभाव है। वहाँ इमाम खुमैनी के मानने वाले शियों की तादाद बहुत ज़्यादा है इसी वजह से वहाँ शिया सुन्नी दंगा होता है।
इस पर मैं ने कहा कि लेकिन लखनऊ में तो शिया सुन्नी दंगे का इतिहास डेढ़ दो सौ साल पुराना है इस में ईरानी प्रभाव कहां से आ गया? (यह सच है कि लखनऊ में बड़े बड़े शिया सुन्नी झगड़े हुए और सब से बड़ा दंगा ईरान की इस्लामी क्रांति से दो साल पहले 1977 में हुआ तो इमाम खुमैनी का प्रभाव इस दंगे की वजह कैसे हो सकता है?) मैंने कहा कि मिस्टर लरमैन आप को शायद नहीं मालूम कि ईरान की इस्लामी क्रांति के बाद से लखनऊ में कोई बड़ा फ़साद नहीं हुआ। बल्कि शिया सुन्नी वर्ग के लोग क़रीब आए हैं।
मेरे इस तर्क पर उसे कुछ जवाब देते बन नहीं पड़ा। इस बीच प्रतिनिधि मंडल के एक सदस्य ने मेरी तरफ़ इशारा करके कहा कि यह भी लखनऊ के हैं, यह सुन कर लरमैन ने अपनी बात बदल दी और वह ईरान के राष्ट्रपति महमूद अहमदी निज़ाद को बुरा कहने लगा और बोला कि आज की ईरानी लीडरशिप इस्राईल के वजूद को ख़त्म करना चाहती है। क्या किसी देश को ख़त्म करने की सोच एक सभ्य देश की रणनीति का हिस्सा हो सकती है? इस पर मैंने कहा कि इस्राईल भी तो कई मुस्लिम देशों को तबाह करके ग्रेटर इस्राईल क़ायम कर रहे हैं क्या यह सभ्य सोच है? तो लरमैन तिलमिला कर बोला कि नहीं यह सफ़ेद झूठ है ग्रेटर इस्राईल की बात हम लोग नहीं करते। (जब कि लरमैन खुद सफ़ेद झूठ बोल रहा था) इस पर मैं ने उस से पूछा कि इस्राईल के राष्ट्रीय ध्वज पर दो महा नदियों के बीच स्टार ऑफ़ डेविड दर्शा कर क्या आप लोग ग्रेटर इस्राईल के सपने को सच बनाने की कोशिश नहीं कर रहे हैं? इस पर लरमैन ने कहा कि हमारे ध्वज पर बनी दो नीली पट्टियाँ अल्लाह से नज़दीकी का

प्रतीक हैं। ज़ाहिर है लरमैन के पास मेरे सवाल के बारे में कोई ठोस तर्क था ही नहीं तो वह और कहता भी क्या।
मैंने महसूस किया कि लरमैन अपनी बातचीत में सिर्फ़ इसी बात पर ज़ोर दे रहा है कि सुन्नी वर्ग के लोग तो बहुत शांति प्रिय हैं और सारे झगड़े की जड़ केवल शिया वर्ग के लोग हैं। इस बात पर मैंने लरमैन को बोल्ड करते हुए पूछा कि क्या तालिबान और अल-क़ायदा भी शिया हैं? तो लरमैन बोला कि वह लोग भटके हुए लोग हैं मैं ने फिर चुटकी ली और पूछा कि इराक के पूर्व राष्ट्रपति सद्दाम हुसैन के बारे में आप का क्या ख़्याल है। लरमैन मेरी बात टाल कर दूसरी तरफ़ देखने लगा।
इस बीच ज़ीशान ने एरान लरमैन से कहा कि एक अमरीकी पत्रकार ने हिज़्ब उल्लाह और इस्त्राईल के बीच चली जंग में जो रेटिंग दी है उस के अनुसार हिज़्ब उल्लाह को तीन नंबर और और इस्त्राईल को शून्य दिया है। इस पर एरान लरमैन ने अपनी शर्मिंदगी को छुपाते हुए कहा कि नहीं ऐसा नहीं है हम उस युद्ध में बहुत कामयाब रहे। हम ने दुनिया में गोरिल्ला युद्ध के लिए सब से अच्छे माने जाने वाले संगठन हिज़्ब उल्लाह के बेहतरीन लड़ाकू मार दिए जिससे उनकी कमर टूट गई। एरान ने यह भी कहा कि हम ने चौबीस घंटे के अंदर हिज़्ब उल्लाह के लॉंग रेंज मिज़ाइल के सारे अड्डे तबाह कर दिए (यह भी एक सफ़ेद झूठ था) और हम ने हिज़्ब उल्लाह के संचालक हसन नसर-उल्लाह की जादूई इमेज को तोड़ दिया, अब लबनान में हसन नसर-उल्लाह बिल्कुल लोकप्रिय नहीं हैं (लरमैन बेहयाई के साथ झूठ बोल रहा था) हम ने हिज़्ब उल्लाह को आर्थिक रूप से तोड़ कर रख दिया अगर उनके पाँच सिपाही शहीद हुए तो हमारा एक फ़ौजी मारा गया। (हालाँकि लबनान युद्ध के बाद इस्त्राईल के सेनापति को पद मुक्त किए जाने का मामला खुद ही बता रहा था

कि लरमैन के पास झूठ की गठरी के सिवा कुछ नहीं था)
मेरे बाद एक अन्य भारतीय पत्रकार ने लरमैन से कहा कि आप ने इस्त्राईल के जिन सैनिकों को छुड़ाने के लिए लबनान पर हमला किया था वह तो आज भी हिज़्ब उल्लाह के पास हैं तो आप को इस युद्ध से क्या मिला,,, आप उनकी शर्तें मान क्यों नहीं लेते? इस का जवाब देते हुए लरमैन ने कहा कि अगर हम हिज़्ब उल्लाह की शर्तें मान लेंगे तो वह जीत जाएँगे। उस ने लेकिन दबी जुबान से यह बात मान ली कि दक्षिणी लबनान में इस्त्राईल की हार ने हिज़्ब उल्लाह का हौसला बढ़ाया है।
अपनी बातचीत के दौरान एरान लरमैन ने हमास के नेता अब्बास हानिया की कड़ी भर्त्सना की और अल-फ़तह द्वारा नियुक्त किए गए प्रधान मंत्री सलाम फ़य्याज़ और फ़िलिस्तीन में ग़ाज़ा पट्टी पर राज कर रहे अध्यक्ष महमूद अब्बास की ख़ूब जम कर तारीफ़ की। उस ने कहा, ''मिश्र और जार्डन जैसे मुस्लिम देश इस्त्राईल की नीतियों से सहमत हैं। उनके अलावा भी कई अरब देश हमारी बातों से सहमत हैं लेकिन हम इन अरब देशों का नाम नहीं बता सकते।''
लरमैन ने आगे बोलते हुए कहा, ''इस वक़्त इस्त्राईल के चार दुश्मन हैं अर्थात ईरान, हिज़्ब उल्लाह, हमास और सीरिया। इस क्षेत्र के बाक़ी देश हमारे साथ सहयोग करना चाहते हैं। इस्त्राईल के बारे में मुसलमानों के नज़रिये में काफ़ी परिवर्तन आया है।''
इस बात पर मैं ने कहा कि यदि आप का यह दावा सही है तो फिर भारतीय उपमहाद्वीप में इस्त्राईल के विरुद्ध इतनी नफ़रत क्यों है? वहाँ के मुसलमान इस्त्राईल से इस क़द्र घृणा क्यों करते है कि केवल एक छोटे से प्रतिनिधि मंडल के यहाँ आने पर सारे देश में रोष व्यक्त किया जा रहा है? इस पर एरान ने जवाब देते हुए कहा, ''भारतीय मुसलमान अज्ञानता और शिक्षा की कमी के

कारण ऐसा कर रहे हैं।'' मैंने एरान से फिर पूछा कि आप को ऐसा नहीं लगता कि पश्चिम एशिया की सभी समस्याओं की जड़ अमरीका है? तो उस ने झट से कहा, ''अमरीका की नीतियों के बारे में लोगों को ग़लतफ़हमी हैं, अमरीका मुस्लिम देशों में लोकतंत्र स्थापित करना चाहता है ताकि मुसलमान अपने मन पसंद नेता चुन सकें।'' इस पर मैंने उसको टोकते हुए पूछा कि क्या अमरीका अरब देशों पर राज्य कर रहे बादशाहों और ताना शाहों को हटाने की योजना बना रहा है? एरान ने मेरे इस सवाल का जवाब नहीं दिया और बात टालते हुए कहा, ''जो भी हो हम को अमरीका की दोस्ती पर नाज़ है। हम दोनों एक दूसरे के हितों का ख़्याल रखते हैं।

जब मैंने उस से पूछा कि क्या इस्राईल की सरकार फ़िलिस्तीन के लोगों से दोस्ती करने के लिए फिलिस्तीनी क्षेत्रों को ख़ाली कर देगी? इस पर एरान ने कहा कि हम फिलिस्तीनी क्षेत्रों से हट नहीं सकते हैं क्योंकि इन क्षेत्रों से इस्राईल के शहरों पर रॉकेट दाग़े जाते हैं। मैंने उस से कहा कि मिस्टर एरान मेरा आख़िरी सवाल यह है कि क्या आप यह सोचते हैं कि मस्जिद-ए-अक़्सा को मुसलमानों के हवाले किए बिना पश्चिम एशिया में शांति स्थापित हो सकती है? इस पर एरान ने बहुत मक्कारी के साथ मुस्कराते हुए कहा कि हम इसराईली इस बात पर गर्व महसूस करते हैं कि हम अल-क़ुद्स के संरक्षक हैं हम भला यह गौरव अपने हाथ से कैसे जाने देंगे? हम मस्जिद-ए-अक़्सा की देख रेख करते रहेंगे।

इस बातचीत में एरान लरमैन ने इस्राईल की शांति वार्ताओं और अमन की कोशिशों की पूरी पोल खोल दी। उस की बातों से यह बात भी साफ़ हो गई की मस्जिद-ए-अक़्सा पर अपना क़ब्ज़ा बनाए रखने के लिए उस ने कैसे कैसे बहाने तराशे हुए हैं। इस बातचीत से यह बात भी साबित हो गई कि इस्राईल के राजनेता और

गुप्तचर विभाग के लोग सारी दुनिया में इस्त्राईल शिया सुन्नी विवाद को हवा दे कर अपना उल्लू सीधा करना चाहता है। इस्त्राईल के लोगों को लखनऊ जैसे एक छोटे से भारतीय शहर के शिया सुन्नी झगड़े में कितनी दिलचस्पी है इस बात का अंदाज़ा एरान लरमैन से बातचीत के दौरान हो गया एरान लरमैन को यह भी मालूम था कि लखनऊ में आयत उल्लाह ख़ुमैनी का समर्थन करने वाले शिया लोग ज़्यादा हैं या आयत उल्लाह सीसतानी के मानने वाले अधिक हैं । मुझे लगा कि जब इस्त्राईल को लखनऊ के शिया सुन्नी झगड़े में इतनी दिलचस्पी है तो इस में भी कोई ताज्जुब की बात नहीं होगी अगर वह इस दंगे को भड़काने वाले धर्मगुरुओं को पैसा भी देता हो।

इस्त्राईली संसद में

दौरे के दूसरे दिन भारतीय प्रतिनिधि मंडल से मिलने के लिए एक सूफ़ी धर्मगुरु शेख़ अब्दुल अज़ीज़ बुख़ारी होटल में आए। इन को इस्त्राईल की सरकार की ओर से नियुक्त किया गया था या अमरीकी ज्युईश कमेटी ने भेजा था यह पता नहीं चल सका लेकिन शेख़ साहब के बारे में हम लोगों को यह अवश्य बताया गया कि शेख़ अब्दुल अज़ीज़ सुप्रसिद्ध मुस्लिम धर्मगुरु और इतिहास कार इमाम बुख़ारी के वंशज हैं। इमाम बुख़ारी को इस्लामी जगत में बहुत आदर की नज़र से देखा जाता है क्यों कि उन्होंने हदीस-ए-रसूल अर्थात पैग़ंबर हज़रत मोहम्मद के वचनों को एक पुस्तक के रूप में संकलित किया था। इस पुस्तक को सहीह बुख़ारी कहा जाता है। हम को बताया गया कि शेख़ साहब यरोशलम में रहने वाले उज़बेक समुदाय के धर्मगुरु हैं और उनका परिवार उज़बेकिस्तान से प्रस्थान करने के बाद यरोशलम में 1616 से आबाद है। शेख़ अब्दुल अज़ीज़ के बारे में यह भी बताया गया कि वह यहूदी और मुसलमान वर्गों के बीच रिश्ते सुधारने में बहुत अहम भूमिका निभा रहे हैं। शेख़ साहब हम लोगों से बहुत अच्छी तरह पेश आए और दिन भर के लिए हम लोगों के साथ हो गए।उन्होंने नाश्ता हम लोगों के साथ ही किया और नाश्ते के बाद प्रतिनिधि मंडल को इस्त्राईल की संसद देखने के लिए ले जाया गया। इस्त्राईल की संसद को केनेसट Knesset कहा जाता है। इसके सदस्यों की कुल तादाद 120 जिसमें एक मुसलमान सदस्य भी है। इस्त्राईल की संसद के लिए जो चुनाव होते हैं उसमें उम्मीदवार चुनाव नहीं लड़ते हैं बल्कि विभिन्न दल चुनाव लड़ते है और जिस पार्टी को जितने वोट मिलते हैं उसी अनुपात में उस को सीटें आवंटित कर दी जाती हैं बाद में उक्त

दल उन सीटों पर अपने उम्मीदवार मनोनीत कर देते हैं।

केनेसट में भारतीय प्रतिनिधि मंडल के साथ इस्राईल की लेबर पार्टी और Meretz पार्टी के सदस्यों से मिलने का कार्यक्रम था। वहाँ पहुँचते प्रतिनिधि मंडल की मुलाक़ात एक सांसद व रब्बाई (यहूदी धर्मगुरु) माइकल मेलेचर से करवाई गई। जैसे ही वह मीटिंग स्थल पर पहुँचे तो भारतीय दल की तरफ़ देख कर बोले ''सारी दुनिया यह समझ रही है कि यरोशलम के यहूदी और मुसलमान एक दूसरे का ख़ून बहा रहे हैं,,,,जबकि यह बात बिल्कुल ग़लत है आप को यह जान कर बहुत ताज्जुब होगा कि यहाँ पर आपस में ख़ूब दोस्ती है।" माइकल मलेचर ने यह भी कहा, " यहाँ वास्तव में धर्म का कोई विवाद है ही नहीं, यहाँ पर तो राष्ट्रीयता का झगड़ा है। मलेचर की यह बात मुझे बहुत हास्यप्रद लगी क्योंकि इस्राईल की स्थापना धर्म के नाम पर ही हुई है लेकिन अब यहूदी लोग इस विवाद को मुस्लिम यहूदी विवाद में देखना पसंद नहीं करते क्योंकि इस तरह इस्राईल का दुश्मन हर मुसलमान समझा जाएगा लेकिन राष्ट्रीयता की बात करने से विवाद का दायरा संकुचित हो जाएगा।

मैं ने माइकल मलेचर से पूछा कि क्या इस्राईल हमास से इस लिए नाराज़ है कि वह इस्लाम का नाम लेने वाला संगठन है तो इस सवाल के जवाब में मलेचर ने कहा कि हमास की जो पॉलिसी है उसके अनुसार इस्राईल का अस्तित्व नहीं रह जाएगा और इस ज़मीन पर एक यहूदी को दफ़न किए जाने की भी इजाज़त नहीं मिलेगी। उन्होंने कहा कि यदि हमास इस्राईल को मिटाने का विचार छोड़ दे तो समस्या हल हो जाएगी और फ़िलिस्तीन के लोगों को उनके अधिकार मिल जाएँगे। एक इसराईली सांसद के लहज़े में इतनी नर्मी देख कर मुझे लगा कि हिज़्ब उल्लाह से मात खाने के बाद इन लोगों का दिमाग़ कुछ कुछ ठिकाने पर आ गया

है वरना इस्राईल के नेता तो हमेशा घमंड में डूबी आवाज़ में बात करते थे। माइकल मलेचर कोई मामूली सांसद नहीं हैं वह लेबर पार्टी की सरकार में कई बार मंत्री का पद सँभाल चुके उनके पास विदेश उपमंत्री का पद भी रह चुका है। जब मैं ने उन से पूछा कि उनकी सरकार के ज़माने में यह विवाद क्यों हल नहीं हो सका तो उसका वह कोई उचित जवाब नहीं दे सके। जब मैं ने ईरान के बारे में इसराईली नेताओं के कड़े रुख़ के बारे में पूछा तो उन्होंने कहा कि ईरान को चाहिए कि वह इस्राईल को मिटा देने कि बात करना छोड़ दे तो हालात सुधर सकते है। इस पर मैं ने उन से कहा कि यदि ईरान इस्राईल को बरबाद करने की बात करता है तो इस्राईल भी तो कई अरब देशों को मिटा कर अपने साम्राज्य का विस्तार करना चाहता है, आप को तो ग्रेटर इस्राईल के बारे में मालूम ही है कि इस साम्राज्य की सीमाएँ नील के दरिया से ले कर फ़ुरात महानदी तक फैली हुई होने का प्रस्ताव है। आप के राष्ट्रीय ध्वज में इन्हीं महा नदियों को दर्शाते हुए स्टार ऑफ़ डेविड को बीच में चमकते हुए दिखाया गया है और आप को तो जानते ही है कि इन दोनों महा नदियों के बीच कौन कौन से मुस्लिम देश आते हैं,,,

मेरी इस बात का कोई उचित जवाब तो उनके पास था नहीं इस लिए उन्होंने ग्रेटर इस्राईल की बात को यह कह कर नकार दिया कि इस्राईल के 70 प्रतिशत लोग ग्रेटर इस्राईल के पक्ष में नहीं हैं।

माइकल मलेचर के बाद इसराईली संसद में विपक्ष के नेता रेन कोहन प्रतिनिधि मंडल से मिलने के लिए आए। उन्होंने कमरे में आते ही पहला वाक्य यह कहा कि मुझे तो इस्राईल में सभी लोग ग़द्दार कहते हैं क्योंकि मैं खुले आम यह बात कहता हूँ कि इस्राईल को वह सभी इलाक़े वापस कर देना चाहिए जो उसने

1967 के युद्ध में फिलिस्तीनी मुसलमानों से छीने थे। कोहन ने आगे कहा कि क्षेत्र में शांति उस वक़्त तक स्थापित नहीं हो सकती जब तक कि इस्राईल अपनी 1967 की वाली सीमाओं में नहीं चला जाता। उन्होंने यह भी कहा कि यरोशलम को दो देशों की राजधानी बना दिया जाना चाहिए। बहुत ज़्यादा खुली बातें करने वाले सांसद रेन कोहन हिज़्ब उल्लाह और ईरान के बारे में बहुत संकीर्ण मानसिकता वाले व्यक्ति नज़र आए। भारतीय पत्रकार ज़ीशान हैदर ने जब उन से पूछा कि इस्राईल अपने सैनिकों को हिज़्ब उल्लाह से छुड़ाने के लिए क्या कर रहा है तो कोहन ने झल्ला कर कहा, " हम अपने एक फ़ौजी के लिए उनके एक हज़ार सैनिक रिहा कर सकते हैं लेकिन हम हिज़्ब उल्लाह से बात नहीं कर सकते। आप उन से बात कर के अगर हमारे सैनिकों को रिहा करवा सकते हैं करवा दीजिए। कोहन ने ईरान के राष्ट्रपति श्री महमूद अहमदी निज़ाद के ख़िलाफ़ भी ज़हर उगला और सीरिया के राष्ट्रपति बशार-उल-असद से आह्वान किया कि वह ईरान के साथ अपने ताल्लुक़ात ख़त्म कर लें। साथ ही साथ उन्होंने यह भी कहा कि अमरीका द्वारा सीरिया को शांति वार्ता से अलग रखने की कोशिश की जा रही है जो एक बड़ी बेवक़ूफ़ी है। उन्होंने यह भी कहा कि इस्राईल की सेना को Golan (जोलान) की पहाड़ियों से हट जाना चाहिए क्योंकि शांति का यह आख़िरी मौक़ा है। अगर अभी भी यह बात नहीं समझी गई तो एक बड़ी ख़तरनाक लड़ाई छिड़ने का ख़तरा है।

कुछ पल मुसलमानों के बीच

केनेसट के सदस्यों से मुलाक़ात के बाद भारतीय दल को यरोशलम के नज़दीक स्थित अबू-ग़ोश नाम के एक मुस्लिम गाँव में ले जाया गया। यह इलाक़ा अरब के लज़ीज़ पकवान परोसने वाले होटलों के लिए सारे इस्राईल में जाना व पहचाना जाता है। हमें बताया गया कि यहाँ शाम को इतनी भीड़ होती है कि गाड़ी पार्क करने की जगह मिलना मुश्किल हो जाता है। इस गाँव में लगभग 7 हज़ार मुसलमान आबाद हैं। हम लोगों को अबू-ग़ोश में लंच के लिए लाया गया था लेकिन हम किसी होटल में नहीं बल्कि अबू-ग़ोश के एक मुस्लिम परिवार के मेहमान बनाए गए थे। इस मुस्लिम परिवार के मुखिया ईसा जाबिर एक तुर्क मुसलमान थे इनके परिवार ने कई शताब्दियों पहले तुर्की को छोड़ कर यरोशलम को अपना घर बना लिया था। ईसा जाबिर का घर एक पहाड़ी के दामन में स्थित है जिस के चारों तरफ़ पेड़ों से ढके पहाड़ ही पहाड़ है। यहाँ से नीचे घाटी की तरफ़ देखने में बहुत अच्छा मंजर दिखाई पड़ता है। ईसा जाबिर के घर के द्वार पर अंगूर की बहुत सुंदर बेलें लगी हैं इन में लाल लाल अंगूरों के गुच्छे लटक रहे थे। नीचे की तरफ़ जो बाग़ीचा लगा था उस में दूर तक नीले रंग के Plum लटक रहे थे बिल्कुल नीले रग का कोई फल मैंने जीवन में पहली बार देखा था। हम लोगों ने यहाँ नमाज़ अदा की और फिर तुर्की व अरबी ख़ानों का आनंद लिया। जब सब लोग खा पी चुके तो मैं ने ईसा जाबिर से कुछ बातें करने का मन बना लिया। बातचीत शुरू हुई तो ईसा जाबिर ने कहा कि 1948 से 1967 तक जीवन बहुत कठिन रहा लेकिन अब यहाँ इतनी परेशानियाँ नहीं हैं। हम यहाँ अमन के साथ रहते हैं। मुसलमान और यहूदी बच्चे एक साथ पढ़ते हैं। हम को यहाँ अल्प

संख्यक वर्ग का दर्जा मिला हुआ है। मुझे ईसा जाबिर की बातों से लगा कि वह बहुत ऊपरी मन से बातें कर रहे हैं। इस लिए मैं उनके पास से हट कर आस पास के कुछ लोगों से बात करने का मौक़ा ढूँढ़ लिया। जब मैं ने ईसा जाबिर के मोहल्ले के लोगों से पूछा कि वह इस्राईल में कैसा महसूस करते हैं तो इन लोगों का दिल इनके लबों पर आ गया। अबू-ग़ोश के एक बुज़ुर्ग ने कहा कि इसराईली जितने भी दावे करें कि वह मुसलमानों के साथ बराबरी का सुलूक करते हैं और वह चाहे जितने भी हवाले दें कि यहाँ के अल्प संख्यक वर्ग के साथ न्याय होता है तो इनकी बातों पर यक़ीन मत कीजिएगा। दुख की बात तो यह है कि यह हमारी ही ज़मीन है यह हमारी ही धरती है और हम ही यहाँ तीसरी श्रेणी के नागरिक बन गए हैं। यहाँ यहूदी पहले नंबर के नागरिक हैं और ईसाई दूसरे दर्जे के और हम लोग तीसरे स्थान पर हैं। यहाँ का यह हाल है कि मुसलमानों को अपने मुर्दे दफ़न करने में भी परेशान किया जाता है। इसराईली सरकार ने क़ब्रिस्तानों की देख रेख और उनके प्रबंधन पर भी प्रतिबंध लगा रखा है। उस फिलिस्तीनी बुज़ुर्ग ने कहा कि हमारी सब से बड़ी परेशानी यह है कि दुनिया के किसी कोने में कोई भी आतंकवादी कार्रवाई हुई और यहाँ हमारे बच्चों की धड़-पकड़ शुरू हो जाती है। चाहे 11 सितंबर की वर्षगाँठ हो या कोई और मौक़ा हमारे गाँव में पुलिस की गश्त बढ़ जाती है और नवयुवकों पर कड़ी नज़र रखी जाने लगती है। हम अपने रिश्तेदारों से मिलने के लिए ग़ाज़ा या रमल्ला नहीं जा सकते इन लोगों ने सुरक्षा के नाम पर ऊँची ऊँची दीवारें उठा रखी है। हमारे बच्चों को उच्च शिक्षा के अवसर प्राप्त नहीं हैं उच्च शिक्षा के लिए हम को अपने बच्चों को तुर्की जैसे देशों में भेजना पड़ता है। ईसा जाबिर के मकान के आस पास रहने वाले मुसलमानों की जुबान से निकला हुआ हर शब्द आँसुओं

में डूबा हुआ लग रहा था।
अभी दो घंटे पूर्व ही इस्राईल के एक धर्मगुरु रब्बाई माइकल मलेचर ने हम को यरोशलम की एक ऐसी तस्वीर दिखाने की कोशिश की थी जिस में प्यार, सौहार्द, एकता और भाईचारे के रंग भरे थे। अबू-ग़ोश के मुसलमानों से बातचीत करते ही वह सारे झूठे दावे हवाओं में बिखर कर चूर चूर हो गए और दिमाग़ के पर्दे पर मुसलमानों का दर्द एक दुख भरी दास्तान की तरह अपने निशान बनाने लगा। यहाँ आकर यह सच अपनी आँखों से देखने का मौक़ा मिला कि कल तक जो ज़मीन के मालिक थे वह अपनी ही ज़मीन पर ग़ुलामों से भी बुरी ज़िंदगी गुज़र रहे हैं।
अबू-ग़ोश में अपने मेज़बानों के साथ वक़्त गुज़ारने के बाद हम लोग तलअबीब की तरफ़ रवाना हो गए। यहाँ रास्ते में ही हम लोगों को एक ऐसे मैदान के पास रोका गया जहाँ हर तरफ़ ज़ैतून (Olive) के पेड़ लगे हुए थे। इस मैदान में एक जश्न चल रहा था। इस्राईल के कई स्वयं सेवी संगठनों की ओर से इस मैदान में Sulkha के शीर्षक से एक कार्यक्रम चल रहा था जिसका अर्थ होता है सुलह अथवा समझौता। इस प्रोग्राम में एक स्थान पर यहूदी, मुसलमान और ईसाई युवक युवतियाँ अमन के गीत गा रहे थे तो दूसरी तरफ़ नृत्य हो रहा था। विभिन्न धर्मों के लोगों का यह जमावड़ा इस्राईल जैसे कट्टर यहूदी देश में देख कर ऐसा लगा कि सच में इस्राईल की जनता अपने नेताओं की नीतियों से तंग आ गए हैं और उन्हें अब अमन की तलाश है। कई लोगों ने अपने परंपरागत लिबास पहने हुए थे। कई लोग खाना पकाने और खाने में मस्त थे। इन लोगों ने भारतीय प्रतिनिधि मंडल को बड़ा अच्छा स्वागत किया।
मुझे बताया गया कि तीन दिन के इस कार्यक्रम में इस्राईल के विभिन्न क्षेत्रों से आए हुए ऐसे नवयुवक भी शामिल हैं जिनके माता

पिता युद्ध में मारे गए। कुछ ऐसे युवक भी थे जो पहले आतंकवादी थे लेकिन बाद में हथियार छोड़ कर अमन की कोशिशों में लग गए। इस्त्राईल की यात्रा के दौरान इस प्रकार के सम्मेलन में शामिल होना एक सुखद अनुभव था। इस एकता शिविर में कुछ समय बिताने के बाद हम लोग तलअबीब की तरफ़ रवाना हो गए। वहाँ प्रतिनिधि मंडल को इस्त्राईल की Deputy Prime Minister ज़िप्पी लिवनी (Tezipi Livni) से मुलाक़ात करना थी। तलअबीब के एक सरकारी दफ़्तर में ज़िप्पी लिवनी के साथ यह भेंट निश्चित की गई थी। मगर न जाने क्यों इस मुलाक़ात को बहुत गुप्त रखा गया था। इस मीटिंग की इसराईली मीडिया को बिल्कुल ख़बर नहीं लगने दी गई थी। यह विदेश मंत्रालय के मीटिंग कक्ष में भी न रख कर एक अन्य सरकारी बिल्डिंग में रखी गई थी। मीटिंग स्थल में कैमरे इत्यादि ले जाने की भी इजाज़त नहीं थी।

Tzipi Livini ने भारतीय दल का स्वागत करते हुए कहा कि आप लोगों का यहाँ आना बहुत अहम है और यह एक दिन की बात नहीं है हम लोग बराबर मिलेंगे। लिवनी ने कहा कि इस क्षेत्र में झगड़ा फ़िलिस्तीन और इस्त्राईल के बीच नहीं है बल्कि यहाँ Extremists और Moderates के बीच विवाद है। लिवनी के इस कथन का यही मतलब था कि वह यहूदी जो अपनी सदियों पुरानी पोशाक और सिर पर चिपकी हुई गोल टोपी के बिना घर से निकलते ही नहीं वह Moderates हैं और वह फिलिस्तीनी जो अपनी धरती और अपने देश की आज़ादी चाहते हैं वह चरम पंथी हैं? लिवनी ने कहा कि हम दूसरों के धार्मिक विश्वास के ख़िलाफ़ नहीं है लेकिन ईरान समेत कई शक्तियाँ हमारे अस्तित्व को मिटाना चाहती हैं। कुछ लोग आतंकवाद को बढ़ावा देने के लिए छोटे छोटे बच्चों को भी अपनी कमर में बम बाँध कर शहीद होने

की प्रेरणा दे रहे हैं। हम को इस वक़्त अरबों और मुसलमानों की मदद चाहिए है ताकि इस्राईल और फ़िलिस्तीन के बीच चल रहा झगड़ा समाप्त हो जाए।

लिवनी के भाषण के बाद मैंने उससे पूछा कि आप ने कहा कि ईरान समेत कई शक्तियाँ इस्राईल के वजूद को मिटाना चाहती हैं लेकिन मुसलमानों का कहना है कि यहूदी क़ौम फ़ुरात महानदी से लेकर नील महा नदी के किनारों तक Greater Israel के नाम से एक साम्राज्य स्थापित करने का सपना देख रही हैं, ग्रेटर इस्राईल के बारे में आप का क्या कहना है ? इस पर लिवनी ने कहा कि नहीं हम अपने देश की सीमाओं को अब और अधिक फैलाना नहीं चाहते। हम बस शांति चाहते हैं और फिलिस्तीनियों को एक होम लैन्ड देना चाहते हैं।

मैंने लिवनी से फिर पूछा कि दुनिया भर के मुसलमान यह सोचने पर क्यों मजबूर हैं कि इस्राईल की सरकार अल-फ़तह के नेता महमूद अब्बास की सहायता कर के फिलिस्तीनियों को बाँटने की कोशिश कर रही है? इस का जवाब देने से बचते हुए लिवनी ने कहा कि फ़िलिस्तीन में Extremists और Fundamentalists के बीच टकराव है। फिलिस्तीनियों को चाहिए कि वह अपने बीच से चरम पंथी नेताओं को निकाल फेंके। लिवनी के कहने का मतलब यह था कि फिलिस्तीनी लोग इस्राईल से संघर्ष करने वाले संगठन हमास से किनारा कर लें और इस्राईल के पसन्दीदा नेता महमूद अब्बास की गोद में बैठ जाएँ। एक अन्य भारतीय पत्रकार ने लिवनी से पूछा कि आप को क्या लगता है कब तक फिलिस्तीनियों को उनके अधिकार मिल जाएँगे? इस के जवाब में लिवनी ने कहा कि हमारे प्रधान मंत्री यहूद ओलमर्ट और अबू माज़न (महमूद अब्बास) के बीच बातचीत जारी है और जल्द ही कोई नतीजा निकलेगा। मैंने लिवनी से फिर एक सवाल पूछा कि

क्या आप को लगता है कि क़ुद्स यानी यरोशलम को मुसलमानों को वापस किए बिना पश्चिम एशिया में शांति स्थापित हो सकती है? इस पर लिवनी ने बहुत जल भुन कर जवाब देते हुए कहा " मुसलमानों के लिए सब से प्रमुख धर्मस्थल मक्का है और दूसरा महत्वपूर्ण धर्मस्थल मदीना है, यरोशलम उनके लिए तीसरा स्थान रखता है, लेकिन हमारे लिए तो यरोशलम सर्वोच्च धर्मस्थल है। मुसलमानों को हमारी भावनाओं का आदर करते हुए यरोशलम को छोड़ देना चाहिए। लिवनी ने यह भी कहा कि इस्राईल के ख़िलाफ़ नफ़रत इस पैमाने पर भरी जा रही है हम पर फ़िदाईन के हमले हो रहे है सपनों का एक स्वर्ग दिखा कर लोगों को अपनी जान देने पर आमादा किया जा रहा है।
मैंने आख़िरी सवाल करते हुए पूछा कि आप को नहीं लगता कि पश्चिम एशिया में अमरीका की ग़लत पॉलिसियों की वजह से रोज़ाना नई नई मुश्किलें खड़ी हो रही हैं? मेरे इस सवाल का जवाब देने से पहले ही लिवनी के एक सहायक ने लिवनी के कान में कुछ कहा उसके बाद लिवनी जाने के लिए खड़ी हो गई और मेरे सवाल का उसने कोई जवाब नहीं दिया।
संवाददाताओं के सवालों के बाद भारतीय दल के लोगों ने लिवनी को एक महँगी शाल भेंट की और उसके साथ फ़ोटो खिंचवाए। इस दौरान दल के एक सदस्य को लिवनी के साथ तस्वीर खिंचवाने का मौक़ा नहीं मिला। इस बात पर वह साहब ख़ूब जम कर चिल्लाए। ऐसा लग रहा था कि उनको किसी ऐसे काम से वंचित कर दिया गया जिससे अल्लाह बहुत ख़ुश होता। उनको इस बात पर भी ग़ुस्सा था कि उनको लिवनी के सामने शांति के लिए दुआ भी नहीं करने दी गई। इसराईली सुरक्षा बल के लोग दल के उस सदस्य को चीख़ते हुए हैरत से देखते रहे लेकिन वह समझ नहीं पा रहे थे कि आख़िर मामला क्या है।

लिवनी से मिलने के बाद हम लोगों को डिनर लेना था लेकिन अभी डिनर में काफ़ी समय बाक़ी था इस लिए हम लोग पास के ही एक माल में टहलने लगे। यहाँ पर सुरक्षा के बहुत कड़े इन्तिज़ाम थे, इसलिए सब ही को माल में दाख़िल होने से पहले तलाशी का सामना करना पड़ा। माल में सब ही चीज़ें इतनी महँगी थीं कि वहाँ से कुछ भी ख़रीदना बेवक़ूफ़ी होता हम सब लोग थोड़ी देर घूमने के बाद बाहर आ गए और वहाँ से एक भारतीय रेस्टोरेन्ट 'इंदिरा' में पहुँच गए जहाँ हम लोगों को डिनर दिया गया था। यहाँ हिंदुस्तानी बिरयानी, कबाब, पराठे, मछली, चिकन और कुछ साग सब्ज़ी भी परोसे गए थे। हमारे साथ शेख़ अब्दुल अज़ीज़ भी सुबह से मौजूद थे। उन से हिंदुस्तानी दल के लोगों ने पूछा कि क्या यहूदी वर्ग के लोगों के यहाँ गोश्त खाया जा सकता है तो उन्होंने कहा कि यहूदी भी मुसलमानों की तरह ही जानवर काटते हैं और जानवर को ज़िबह करने से पहले अल्लाह का नाम भी लेते हैं। इस लिए उनके यहाँ गोश्त खाया जा सकता है। जिस तरह मुसलमानों के यहाँ जानवर को ज़िबह करने को हलाल कहा जाता है उसी तरह यहूदी इस को KOSHAR का नाम देते हैं। भारत के शाकाहारी और मांसाहारी ख़ानों का मज़ा लेने के बाद भारतीय दल Eretz Museum के लिए रवाना हो गया। वहाँ भारत के स्वाधीनता दिवस की 60 साल पूरे होने और इस्राईल के साथ भारत के राज नैतिक संबंध स्थापित होने कि 15 वीं वर्षगाँठ के सिलसिले में एक जश्न आयोजित किया गया था। जब हम लोग संग्रहालय के सभागार में पहुँचे तो भारतीय दल के दो सदस्यों मौलाना अफ़ज़ाल निज़ामी व मौलाना हिफ़्ज़-उर-रहमान ने अंदर जाने से इन्कार कर दिया। इन लोगों का कहना था कि वहाँ नृत्य एवं संगीत का कार्यक्रम चल रहा है और इस्लाम में नृत्य देखने की इजाज़त नहीं है, इसलिए वह नहीं

जाएँगे। हम लोग उन दोनों को छोड़ कर अंदर पहुँचे। वहाँ पहले कुछ भाषण हुए और भारत इस्राईल के संबंधों पर रोशनी डाली गई। उसके बाद भारत की नर्तकी कबिता राय चौधरी ने ओडीसी नृत्य पेश किया। कुछ देर बाद भारतीय दल कार्यक्रम के बीच से ही उठ कर चला आया, क्योंकि उस को वापस यरोशलम जाना था।

रात होटल में पहुँचने के बाद मैं सोचता रहा कि आज हर यहूदी नेता यही कहता है कि दो देशों का फ़ार्मूला अपनाया जाए यानी जिस की लाठी उस की भैंस वाली कहावत पर अमल करते हुए इस्राईल को एक मुल्क दे दिया जाए। इस्राईल की स्थापना के फ़ार्मूले को इस तरह भी समझा जा सकता है कि मेरे घर पर कोई ताक़त के बल पर क़ब्ज़ा कर ले और ज़ोर ज़ोर से कहे कि यह तो वही घर है जिसका अल्लाह ने मुझ से वायदा किया था। तो मैं क्या करूँगा जो चीज़ भी मेरे हाथ लगेगी उसी से उस दबंग पर वार करूँगा। ऐसा ही कुछ फिलिस्तीनी मुसलमानों के साथ भी हुआ। उनके घर पर एक दबंग ने क़ब्ज़ा कर लिया तो उन्होंने उस से निजात पाने के लिए जो कुछ हाथ आया उसी से वार किया। लेकिन जब वह कामयाब न हुए तो उन्होंने हमास जैसा संगठन बनाया और अपने कुछ मुस्लिम भाइयों की मदद से इस्राईल को थोड़ा सा दबाने में कामयाबी हासिल की तो आज इस्राईल यह कह रहा है कि जो हुआ सो हुआ। आओ अब पुरानी बातें भूल कर तुम्हारी ज़मीन को बाँट लें और शांति स्थापित करें विश्व को इस समय अमन की ज़रूरत है और अगर फिलिस्तीनी अपनी ज़मीन देने को तैयार न हों तो वह आतंकवादी हैं।

शुक्रवार की नमाज़

आज भारतीय दल के लोगों को शुक्रवार की नमाज़ के लिए मस्जिद-ए-अक़्सा जाना था। लेकिन चूँकि नमाज़ से पहले हमारे पास काफ़ी समय था, इसलिए भारतीय दल के मेज़बानों ने शिष्ट मंडल के सदस्यों के सुबह दस बजे याद वाशेम नाम का संग्रहालय दिखाने का प्रोग्राम बनाया। इस संग्रहालय को Holocaust (नरसंहार) म्यूज़ियम भी कहा जाता है। इस संग्रहालय में यहूदी समुदाय पर हिटलर के तथाकथित अत्याचारों को फ़िल्मों और नाटकीय वीडियो के ज़रिये दिखाया जाता है। होलोकास्ट की सच्चाई के बारे में ईरानी राष्ट्रपति महमूद अहमदी निज़ाद द्वारा उठाए गए सवालों के बाद से इस्राईल के लोग बहुत बौखला से गए हैं और इस्राईल आने वाले हर आदमी को वह लोग होलोकास्ट म्यूज़ियम दिखाने ज़रूर ले जाते हैं। भारतीय शिष्ट मंडल के लोग तो संग्रहालय देखने के लिए चले गए लेकिन हम तीनों पत्रकार नहीं गए। हम लोगों ने कह रखा था कि हमें अपने अपने कार्यालयों को रिपोर्ट भेजने के लिए साईबर कैफ़े जाना है। हम लोगों को पुराने शहर की गलियों में एक साईबर कैफ़े में पहुँचा दिया गया। हम इस कैफ़े तक पतली पतली गलियों से होते हुए एक सीढ़ी तक पहुँचे और यह सीढ़ी चढ़ने के बाद छोटे छोटे कैबिन वाले साईबर कैफ़े में तीन कैबिन मिल गए। इस कैफ़े के मालिक का बेटा या भाई भी शहीदों में शामिल था क्योंकि साईबर कैफ़े में उस का चित्र भी लगा था। हम लोगों ने डेढ़ दो घंटे साईबर कैफ़े में गुज़ारे। मैंने रोज़नामा राष्ट्रीय सहारा में Despatch भेजा, शेख़ मंज़ूर साहिब ने यू एन आई के लिए और ज़ीशान हैदर ने पी टी आई के लिए रिपोर्ट रवाना की। हम लोगों के यहाँ से पैदल चल कर ही मस्जिद-ए-अक़्सा जाना था। इस बीच

भारतीय शिष्ट मंडल भी होलोकास्ट म्यूज़ियम देख कर वापस आ गया था। इन में से कई लोग होलोकास्ट म्यूज़ियम देख कर काफ़ी प्रभावित नज़र आ रहे थे। हालाँकि यह म्यूज़ियम इस्त्राईल के ज़ुल्म ओ सितम पर पर्दा डालने की एक कोशिश के सिवा कुछ नहीं है। मुसलमानों पर अत्याचारों का पहाड़ तोड़ने वाले यहूदी 70-80 वर्ष पुरानी तस्वीरें दिखा कर अपने ज़ुल्म को छुपाने की नाकाम कोशिश में लगे हुए हैं।

हम लोग साईबर कैफ़े से पैदल ही मस्जिद-ए-अक़्सा की तरफ़ चल पड़े। इस तरह पुराने शहर की विभिन्न गलियों से गुज़रने का मौक़ा मिला।जुम्मा यानी शुक्रवार को यरोशलम में बड़ा रूहानी दृश्य होता है। पुराने नगर के हर मोहल्ले से लोगों के समूह मस्जिद-ए-अक़्सा की तरफ़ जाते हुए नज़र आते हैं। मुसलमानों की तमाम दुकानें बंद होती है। मस्जिद की तरफ़ जाने वाली हर गली में अपार भीड़ होती है। ऐसा लगता है कि दिल्ली की जामा मस्जिद में मुसलमान ईद की नमाज़ अदा करने के लिए जा रहे हों। अगर नमाज़ से आधे घंटे पहले मस्जिद के अंदर न पहुँचे तो मस्जिद के दालानों में आप को नमाज़ पढ़ने के लिए जगह मिलना संभव नहीं होगा क्योंकि नमाज़ से काफ़ी पहले ही मस्जिद के बड़े बड़े दालान (हाल) नमाज़ियों से भर जाते हैं। महिलाएँ भी यहाँ बड़ी संख्या में नमाज़ पढ़ने के लिए एकत्रित होती हैं लेकिन उनकी पंक्तियाँ पुरुषों से अलग होती हैं। अनेक महिलाएँ उस हिस्से में भी नमाज़ अदा करती हैं जहाँ मेराज की रात में पैग़ंबर हज़रत मोहम्मद का बुर्राक़ (विशेष सवारी) उतरी थी। नमाज़ शुरू होते होते मस्जिद का विशाल आँगन भी नमाज़ियों से खचाखच भर जाता है।

भारतीय डेलिगेशन के लोग शेख़ अब्दुल अज़ीज़ बुख़ारी के साथ नमाज़ शुरू होने से काफ़ी देर पहले ही मस्जिद में पहुँच गए।

समय से पहले पहुँचने की वजह से भारतीय दल को मस्जिद के उस भाग में जगह मिल गई जो मस्जिद का सब से पुराना भाग है। कहा जाता कि यह मस्जिद का वही हिस्सा है जिसका निर्माण कई हज़ार वर्ष पहले पैग़ंबर हज़रत इब्राहीम ने किया था। इस्लामी इतिहासकारों के अनुसार मक्का में पवित्र काबा के निर्माण के छै वर्ष बाद यरोशलम में हज़रत इब्राहीम ने इस मस्जिद की आधार शिला रखी थी। कई हज़ार वर्षों तक यह मस्जिद यहूदियों के कब्जे में रही फिर इस पर ईसाइयों ने क़ब्ज़ा जमा लिया लेकिन बाद में यह मुसलमानों को मिल गई। मुस्लिम शासक सुलतान सलाह-उद-दीन अय्यूबी ने इस मस्जिद का नवीनीकरण किया तो मस्जिद के ऊपरी भाग को केंद्रीय हाल में परिवर्तित कर दिया क्योंकि पुराने दालान (हाल) में नमाज़ियों के लिए जगह कम पड़ने लगी थी। लेकिन हज़रत इब्राहीम के बनवाए हुए दालानों के खंभे कई हज़ार साल गुज़र जाने के बाद भी पूरी तरह बचे हुए हैं इनके पास कुछ नए खंभे बना कर मज़बूती प्रदान की गई है। छतों को रोकने के लिए अब इन्हीं नए स्तंभों पर ज़ोर डाला गया है। अब पुरानी मस्जिद एक तहख़ाने (Basement) जैसे लगती है। इसी लिए कई सीढ़ियाँ उतर कर प्राचीन मस्जिद तक पहुँचना पड़ता है। इसी भाग में एक इस्लामी पुस्तकालय भी चल रहा है जिसमें इस्लाम के बारे में काफ़ी अच्छी पुस्तकें उपलब्ध हैं।

मस्जिद-ए-अक़्सा में नमाज़ पढ़ाने के लिए तीन इमाम नियुक्त किए गए हैं। एक इमाम साहब मग़रिब (शाम) की और इशा (रात) की नमाज़ पढ़ाते हैं। दूसरे इमाम साहब ज़ोहर(दोपहर) और अस्र (तीसरे पहर) की नमाज़ पढ़ाते हैं। जबकि तीसरे इमाम साहब फ़ज्र (सुबह) और जुम्मा की नमाज़ पढ़ाने की ज़िम्मेदारी निभाते हैं। जिस दिन हम लोग वहाँ नमाज़ पढ़ने के पहुँचे उस दिन भी शुक्रवार था और उस दिन जुम्मा की नमाज़ शेख़ अबू सनीना पढ़ा

रहे थे। शुक्रवार की नमाज़ की एक विशेषता यह है कि नमाज़ से पूर्व इमाम को एक भाषण भी देना अनिवार्य होता है। इस को खुतबा कहते हैं। जब जुम्मा का पवित्र भाषण शुरू हुआ तो उस की भाषा अरबी थी इसलिए मेरी समझ में कुछ नहीं आया हम सभी लोग ख़ामोशी से इमाम साहब का भाषण सुनते रहे। परंतु खुतबे के अंत में मुझे लगा कि वह अमरीका और इस्राईल की नीतियों की आलोचना कर रहे हैं। जब उन्होंने हमास, हिज़्ब उल्लाह, सीरिया और ईरान का नाम लिया तो मैं उनके भाषण को बहुत ग़ौर से सुनने की कोशिश करने लगा मेरी कुछ भी समझ में नहीं आया लेकिन उनके लहजे से इतना ज़रूर लगा कि इमाम साहब इन चारों शक्तियों की सराहना कर रहे हैं। उनका भाषण ख़त्म हुआ तो सब नमाज़ के लिए खड़े हो गए। पहले जुम्मा की नमाज़ हुई और कुछ देर बाद अस्र (तीसरे पहर) की नमाज़ सब ने जमाअत के साथ यानी सामूहिक रूप से पढ़ी। जैसे ही नमाज़ ख़त्म हुई मैं तो मैंने पास में मौजूद कुछ फिलिस्तीनी युवकों से पूछा कि इमाम साहब ने अपने खुतबे में क्या कहा तो एक युवक ने बताया कि इमाम साहब पश्चिम एशिया में अमरीका और इस्राईल की नीतियों की भर्त्सना कर रहे थे और इन दोनों इस्लाम विरोधी शक्तियों की चालों से मुसलमानों को अवगत करवा रहे थे। इमाम साहब ने ईरान, सीरिया, हिज़्ब उल्लाह और हमास के ख़िलाफ़ चल रही साज़िशों के लिए भी अमरीका को जमकर लताड़ा था और अफ़ग़ानिस्तान तथा ईराक में मुसलमानों के विजयी होने की दुआ माँगी थी। यह सब जानने के बाद मैंने मन ही मन में शेख़ अबू सनीना की हिम्मत को सलाम किया क्योंकि मुझे मालूम था कि मस्जिद के हर एक द्वार पर इस्राईल के हथियार बंद सैनिक मौजूद हैं, फिर भी इमाम साहब ने बिना किसी भय के सच बात कहने की हिम्मत की। मैंने सोचा कि जब

तक मुसलमानों में शेख़ अबू सनीना जैसे वीर उलेमा मौजूद हैं मुस्लिम वर्ग को इस्राईल अथवा अमरीका ताक़त के बल पर दबाए नहीं रख सकते।
नमाज़ ख़त्म होने के बाद मस्जिद के कई हिस्सों में छोटे छोटे मदरसे सज गए जहाँ एक गुरु के समक्ष दस पंद्रह बच्चों का एक दल पवित्र क़ुरआन पढ़ने में लग गया। मैं मस्जिद के दालान से निकल कर बाहर आँगन में आया और अरब नागरिकों की भीड़ में खो गया ताकि यहाँ के स्थानीय निवासियों से वह प्रश्न पूछ सकूँ जो मैं अपने मन में छुपाए हुए भारत से यहाँ तक पहुँचा था। मैंने एक लंबे से युवक को अपने पास इशारे से बुलाया और पूछा कि तुम को अँग्रेज़ी आती है? तो उस ने मेरे सवाल का जवाब दिए बिना ही एक दूसरे लड़के को आवाज़ देकर बुलाया उस लड़के ने मेरे क़रीब आते ही मुझ से पूछा ''पाकिस्तानी?'' मैंने कहा 'हिंदी'' (भारतीय) उसने बहुत ही ख़ुशी से मेरा हाथ थाम लिया। मैंने उस से कहा कि इस्राईल के नेता हिज़्ब उल्लाह को बहुत बुरा कहते हैं तुम्हारा उस संगठन के बारे में क्या विचार है? मेरे इस सवाल के जवाब में अबू हमज़ा नाम के उस युवक ने तड़प कर अपने सीने पर हाथ रखा और अँग्रेज़ी में कहा, '' हिज़्ब उल्लाह हमारे दिल की आवाज़ है,,,वह शूर वीर जवान हैं,,, उन्होंने मुसलमानों का सिर ऊँचा किया है।'' मैंने उस से फिर पूछा कि तुम्हारा हमास के बारे में क्या ख़्याल है? तो उस ने मायूसी भरे लहज़े में कहा, '' हमास और अल-फ़तह के बीच की लड़ाई बहुत दुखी करने वाली है, अमरीका इन दोनों को लड़वा रहा है।''
मोहम्मद नाम के एक दूसरे लड़के से भी मैंने सब से पहले हिज़्ब उल्लाह के बारे में सवाल किया तो उस ने जवाब में अपने हाथ को घूँसे की तरह ऊँचा किया और बोला ''हिज़्ब उल्लाह शेरों का क़बीला है,,, क्या हुआ जो वह शिया हैं,,, किस को मालूम कौन

स्वर्ग में जाएगा और कौन नरक में,,, इसका फ़ैसला तो अल्लाह करेगा लेकिन आज तो उन्होंने हम मुसलमानों को बता दिया कि इस्त्राईल जैसी शक्ति के सामने सिर उठा कर कैसे खड़ा हुआ जा सकता है। हमास के बारे में पूछे गए सवाल पर मोहम्मद ने कहा कि हमास को हथियार छोड़ कर अपने भाइयों को गले लगाना चाहिए, दोनों गिरोह मिल कर ही एक मज़बूत फ़िलिस्तीन के निर्माण में सकारात्मक भूमिका निभा सकते हैं। मुझ को इन नव जवानों से बातें करते हुए देख कर बहुत से लोग मेरे चारों तरफ़ एकत्रित हो गए और मेरी बातें समझने की कोशिश करने लगे। इसी भीड़ में मौजूद एक युबक से मैंने पूछा कि मस्जिद-ए-अक़्सा की देख रेख और उसके संरक्षण के लिए इस्त्राईल की सेना क्या कर रही है? मेरे इस सवाल का जवाब देने के बजाए उस युवक ने मेरा हाथ पकड़ा और मुझे मस्जिद के अंदर ले गया। वहाँ के बड़े दालान में कुछ शो केस रखे थे जिनमें रॉकेट, मिज़ाइल और गोलों के ख़ाली खोखे सजे थे, उस नवयुवक ने कहा कि उन्होंने इस मस्जिद पर संरक्षण के नाम पर यह सब चीज़ें बरसाई हैं,,, मस्जिद की दीवारों पर बने गोलियों के निशान दिखा कर उस ने कहा यह मस्जिद की ईस्त्राइली देख रेख का नमूना,,,''

यरोशलम के इन स्थानीय निवासियों से बातचीत के बाद मैं ज़ीशान हैदर के साथ उस हिस्से की तरफ़ चल पड़ा जहाँ पैग़ंबर हज़रत मोहम्मदस० की सवारी आज से लगभग चौदह सौ वर्ष पहले उतरी थी। वहाँ का दृश्य दिल को छूने वाला था हर तरफ़ महिलाएँ और बच्चे क़ुरआन का पाठ कर रहे थे। कुछ पुरुष भी उस गुफा में नमाज़ में व्यस्त थे जहाँ हज़रत मोहम्मदस० ने मेराज की रात में नमाज़ अदा की थी। मैंने और ज़ीशान हैदर ने उस गुफा में शुक्राने की दो रकअत नमाज़ अदा की और जब हम बाहर निकले तो यह सोच कर थोड़ा परेशान हुए कि इस भीड़ में

भारतीय दल के सदस्यों को कहाँ ढूंढूगे? निर्धारित कार्यक्रम के अनुसार नमाज़ के बाद हम लोगों को शेख़ अब्दुल अज़ीज़ बुख़ारी के घर पर लंच के लिए जाना था और वहीं यरोशलम के वक़्फ़ बोर्ड के अध्यक्ष शेख़ अज़ाम उल ख़तीब तमीमी से मिलना था। परेशानी इस बात की थी की हमें शेख़ अब्दुल अज़ीज़ का घर नहीं मालूम था, मगर मेरी यह परेशानी थोड़ी ही देर में दूर हो गई और भारतीय दल के सदस्य मस्जिद के बरामदे में नज़र आ गए। हम फिर उन्हीं के साथ हो लिए। कुछ क़दम चलने के बाद मस्जिद के बाएँ बरामदे में हम लोगों को भारतीय स्वाधीनता संग्राम के एक प्रसिद्ध सेनानी और ख़िलाफ़त आंदोलन के संचालक मौलाना मोहम्मद अली जौहर की क़ब्र दिखाई पड़ी। इस क़ब्र के बारे में शेख़ अब्दुल अज़ीज़ ने बताया कि मौलान जौहर के पार्थव शरीर को लन्दन से यहाँ जब यहाँ लाया गया तो शेख़ अब्दुल अज़ीज़ के पिता ने ही मौलाना को दफ़नाने की प्रक्रिया अन्जाम दी थी। यहाँ पर यह बताना उचित होगा कि मौलाना मोहम्मद अली जौहर का निधन लन्दन में हुआ था लेकिन उन्होंने कहा था कि मुझे उस देश में दफ़न न किया जाए जो अँग्रेज़ों का ग़ुलाम है। इसी लिए उन की क़ब्र के लिए यरोशलम की धरती को चुना गया लेकिन मौलाना जौहर को कहाँ मालूम था कि जिस ज़मीन पर उन्हें दफ़न किया जा रहा है वह यहूदी धर्म की ग़ुलामी में चली जाएगी। मौलाना मोहम्मद अली जौहर की क़ब्र के पास रुक कर हम सब ने फ़ातिहा पढ़ा (फ़ातिहा पवित्र क़ुरान का प्रथम सूरह है और प्रत्येक मृतक को सवाब पहुंचाने के लिए मुसलमान यह सूरह पढ़ने के बाद को क़ुरआन के एक अन्य सूरह (जिसको) तौहीद (कहा जाता) को तीन बार पढ़ते हैं)

उस के बाद हम लोग शेख़ अब्दुल अज़ीज़ के घर की तरफ़ चल दिए जो मस्जिद से थोड़ी ही दूर पर है। इस क्षेत्र के मकानों की

छतें आपस में मिली हुई थी और पतली पतली गलियों को आपस में जोड़ने के लिए छत्ते भी बने हुए थे। मुझे यहाँ के मकान देख कर लखनऊ की बहुत याद आइ वहाँ भी पड़ोसियों के घरों में जाने के लिए छत्ते बनाए जाते थे ताकि महिलाएँ एक दूसरे के घर बिना बुर्क़ा ओढ़े ही अंदर अंदर जा सकें।

हम शेख़ अब्दुल अज़ीज़ के घर पहुंचे तो मेज़ों पर खाना सजा हुआ था। बड़ी बड़ी तन्दूरी रोटियाँ, आलू गोश्त का सालन और मज़ेदार बिरयानी के अलावा कई क़िस्म की सलाद से हम लोगों की ख़ातिर की गई।

दावत ख़त्म होने के बाद एक छोटा सा कार्यक्रम आयोजित किया गया जिसमें मस्जिद-ए-अक़्सा के मुअज़्ज़िन (अज़ान देने वाले) फ़रास उल क़ज़ाज़ ने बहुत ही दिल लुभाने वाली आवाज़ में पवित्र क़ुरआन का पाठ किया। उस के बाद एक स्थानीय व्यक्ति ने दिल में उतर जाने वाले अन्दाज़ में नात-ए-नबी (पैग़ंबर हज़रत मोहम्मद का प्रशंसा गीत) पेश की। यद्यपि नात अरबी भाषा में होने की वजह से उसका मतलब हमारी समझ में नहीं आ रहा था फिर भी नात सुन कर दिल को बड़ी ताज़गी सी मिल रही थी।

इस कार्यक्रम के बाद भारत से आए हुए तीनों संबाददातों ने यरोशलम के वक़्फ़ बोर्ड के अध्यक्ष व प्रबन्धक शेख़ अज़ाम उल ख़तीब तमीमी से मस्जिद-ए-अक़्सा की देख भाल के बारे में कुछ सवाल किए। शेख़ ने बताया कि मस्जिद-ए-अक़्सा और उसे जुड़े दूसरे औक़ाफ़ (कल्याणकारी संस्थानों) की देख रेख के लिए जार्डन की शाही सरकार की ओर से हर वर्ष 50 लाख रियाल (तीन अरब रूपए) भेजे जाते हैं लेकिन इस्राईल की सरकार मस्जिद की मरम्मत में लगातार रोड़े अटकाती रहती है। उन्होंने ने कहा कि हम को ताक़त के बल पर मस्जिद की मरम्मत करने से रोका जाता है। शायद ईस्राइली सरकार चाहती है कि मरम्मत

के आभाव में मस्जिद खुद ही से गिर जाए। शेख़ तमीमी ने कहा कि मरम्मत के लिए भवन निर्माण सामग्री लाने वाले ट्रकों को ईस्त्राइली सिपाही मस्जिद तक आने नहीं देते। उन्होंने कहा कि यूनेस्को ने भी मस्जिद को संरक्षित स्मारक का दर्जा दिया हुआ है लेकिन यूनेस्को के आग्रह के बावजूद ईस्त्राइली सरकार ने हटधर्मी का रवैया अपनाया हुआ है। उन्होंने कहा कि इस्त्राईल की सरकार अपनी मन मानी करती रहती है। कुछ समय पहले इस्त्राईल की सरकार ने पश्चिमी द्वार के बाहर मोरक़्क़ो गेट को चौड़ा किया ताकि दीवारे ग्रिया के लिए कुछ और जगह निकाली जा सके। शेख़ तमीमी ने कहा कि हम किसी धर्म के विरुद्ध नहीं हैं लेकिन जो शक्ति हमारी मस्जिद को तबाह करना चाहती हो उससे हम शांतिवार्ता कैसे कर सकते हैं।

शेख़ तमीमी से जब पूछा गया कि जार्डन से जो धनराशि आती है उसको किस काम में ख़र्च किया जाता है? तो उन्होंने कहा कि मस्जिद के ट्रस्ट के 600 कर्मचारी हैं उनके वेतन इसी रक़म में से अदा किए जाते हैं। इसके अलावा इसी धन से अनेक पुस्तकालय, स्कूल और कई कल्याण केंद्र चलाए जा रहे हैं। उन्होंने कहा कि मस्जिद-ए-अक़्सा के ट्रस्ट से जुड़े कुछ केंद्रों की अपनी आमदनी भी है, लेकिन यह बहुत कम है। वैसे हम ट्रस्ट द्वारा आमदनी की फ़िक्र नहीं करते क्योंकि ट्रस्ट पैसा कमाने का माध्यम नहीं जन कल्याण के लिए हैं इस लिए हम केवल यह देखते हैं कि ट्रस्ट का मक़सद पूरा हो रहा है कि नहीं।

शेख़ से बातचीत के बाद हम लोग पुराने यरोशलम में घूमने के लिए निकले। इस शहर में मुसलमानों, ईसाइयों और यहूदियों के पवित्र तीर्थ स्थल हैं। हम शेख़ अब्दुल अज़ीज़ के घर से थोड़ी ही दूर चले थे कि वह स्थल आ गया जहाँ से हज़रत ईसा मसीह (के हमशक्ल) को क्रॉस (फाँसी दिए जाने वाला तख़्ता) लेकर चलने

पर मजबूर किया गया था, यहाँ पर एक एक गिरजा घर बना हुआ है। यद्यपि मुसलमानों के धर्म के अनुसार ईसा मसीह को फाँसी पर नहीं चढ़ाया गया था, फिर भी यह मुसलमानों की सहनशीलता का प्रतीक था कि उन्होंने ईसाइयों के इन धर्म स्थलों को अपने कई सौ साल के शासन के दौरान मिटाया नहीं। जिस जगह पर हज़रत ईसा (का हमशक्ल) गिरे थे या जहाँ उनकी माता हज़रत मरियम से उनकी भेंट हुई थी, वहाँ पर एक गिरजा घर बना हुआ है। जिस जगह पर ईसा मसीह (के हमशक्ल) को फाँसी दी गई थी, उस स्थान तक पहुँचने के लिए चढ़ाई पर चढ़ कर जाना पड़ता है और इस रास्ते में लगभग 12 छोटे बड़े चर्च बने हुए है जो हज़रत ईसा मसीह (के हमशक्ल) की अंतिम यात्रा से किसी न किसी प्रकार जुड़े हुए प्रसंग को दर्शाते हैं। अंतिम चर्च में एक बड़ा सा पत्थर रखा हुआ है जिस के बारे में कहा जाता है कि इसी पत्थर पर हज़रत ईसा (के हमशक्ल) शव अंतिम स्नान करवाया गया था। इस पूरे मार्ग पर दुनिया भर से आए हुए ईसाई तीर्थ यात्रियों की टोलियाँ बड़ी संख्या में दिखाई पड़ती हैं । यह तीर्थ यात्री बाइबिल में लिखे गीत पढ़ते हुए चलते हैं और अनेक श्रद्धालु रोते हुए भी यह रास्ता तय करते हैं।

ईसाइयों के सब से पवित्र धर्म स्थल को देखने के बाद हम लोग पुराने यरोशलम की गलियों में पहुँच गए यहाँ पर ऐसा लग रहा था कि जैसे हम दिल्ली के चाँदनी चौक की गलियों से गुज़र रहे हों। कहीं तंदूर में गर्म-गर्म रोटियाँ सेंकी जा रही थीं तो कहीं कबाबों की ख़ुशबू दिल को लुभा रही थी। कुछ दुकानों पर हुक़्क़े सजे थे तो कुछ में इत्र की शीशियाँ सजीं थीं। कुछ दुकानों पर अरबों का विशेष लिबास अर्थात सौब और अबा बिक रहे थे। पुरानी दिल्ली के तर्ज़ पर ही रेस्टोरेन्ट में चाय-काफ़ी पीने और गप बाज़ी करने वालों की भी भीड़ थी लेकिन उस समय तक सभी

दुकानें खुली नहीं थीं क्योंकि शुक्रवार की नमाज़ के बाद ही यहाँ के बाज़ार खुलते हैं। मैंने और ज़ीशान हैदर ने सोचा कि कुछ सामान ख़रीद लिया जाए। इस के लिए हम को डॉलर चेन्ज करवाने थे। यरोशलम में दो प्रकार की मुद्रा चलती है, जार्डन का रियाल और इस्राईल का शैकल। जब हम मनी चेन्जर की दुकान पर पहुंचे तो कई छोटे बच्चे हम लोगों के पास आ कर खड़े हो गए। इन में से दो लड़के साइकिल पर बैठे थे। मैंने उनसे पूछा कि क्या तुम लोग मुसलमान हो? तो उन दोनों ने सिर हिला कर हाँ कहा। फिर मैंने उनके नाम पूछे तो एक ने कहा उसका नाम यासिर है और दूसरे ने कहा कि उस का नाम अहमद है। मैंने फिर पूछा कि तुम हिज़्ब उल्लाह के बारे में जानते हो उस पर यासिर ने कहा Yes..They are our Heroes.. इन बच्चों का जवाब सुन कर मुझे इत्मिनान हुआ कि अमरीका और इस्राईल हिज़्ब उल्लाह के ख़िलाफ़ शिया सुन्नी के नाम पर लाख नफ़रत फैलाने की कोशिश करें, वह कभी कामयाब नहीं हो सकते क्योंकि अब मुसलमान शिया सुन्नी की घृणा के दायरे से बाहर आ रहे हैं।
पुराने यरोशलम की गलियों से गुज़रते हुए हम लोगों को फ़िलिस्तीन के लोगों के दिलों के घाव भी नज़र आए। मस्जिद के रास्ते में पड़ने वाली अनेक दुकानों में उन नवयुवकों के चित्र टँगे थे जिनको इस्राईल की सेना ने शहीद कर दिया था।
घूमते घूमते हम लोग पैग़ंबर हज़रत दाऊद की क़ब्र पर पहुँच गए। इस स्थान पर यहूदी, मुसलमान और ईसाई समान रूप से श्रद्धा सुमन अर्पित करते हैं। मुख्य मज़ार एक तहख़ाने में है जहाँ किसी को जाने की इजाज़त नहीं है। मज़ार की बाहरी दीवारों पर बहुत सी मोम बत्तियाँ रौशन थीं। हम लोग मुख्य द्वार से होते हुए ऊपर की ओर एक हाल में पहुँच गए जहाँ जिसके बारे में पता चला कि वह हाल नहीं बल्कि कई सौ साल पुरानी मस्जिद है।

यहाँ पर एक मेहराब (नमाज़ का नेतृत्व करने वाले इमाम का स्थान) भी बनी है और दीवारों पर पवित्र क़ुरआन की आयतें भी लिखी हुई थीं। इस मज़ार के देखने के बाद भारतीय दल के लोग होटल लौट आए।

यहूदी सबाथ

यहूदियों के लिए शनिवार छुट्टी का दिन होता है। चूँकि यहूदी धर्म में नया दिन सूरज डूबने के साथ शुरू होता है इस लिए यहूदी लोग शुक्रवार को सूर्यास्त के बाद अपने घरों की तरफ़ चल देते हैं और 24 घंटे पूजा में व्यस्त रहते हैं। यह पूजा शुरू होने से पहले सब परिवारजन एक साथ बैठ कर शराब पीते है और हर घर में विशेष भोज का आयोजन होता है जिसको Sabbath कहा जाता है। खाने से पहले यहूदी धर्म की पवित्र पुस्तक से कुछ गीत पढ़े जाते हैं जिन में अल्लाह को अंगूर जैसा फल पैदा करने के लिए धन्यवाद दिया जाता है क्योंकि अंगूर से बेहतरीन शराब बनती है। हम लोगों को सबाथ में शरीक होने के लिए रब्बाई डेविड रोज़न ने आमंत्रित किया था। सूर्यास्त के साथ ही हम लोग उनके घर पहुँच गए। डेविड रोज़न का घर बहुत ख़ूबसूरत था वहाँ से यरोशलम शहर बहुत हसीन लग रहा था। शहर के मध्य मस्जिद-ए-अक़्सा का गुंबद अपनी छटा बिखेर रहा था। फिलिस्तीनी मुसलमानों की बस्तियों में कई जगह आतिशबाज़ी की जा रही थी। उन दिनों हिजरी कैलेंडर का शाबान महीना चल रहा था और उस दिन शाबान की तीन तारीख़ थी। मैंने डेविड रोज़न से आतिशबाज़ी के बारे में पूछा तो उन्होंने बताया कि इस महीने में मुसलमानों के यहाँ शादी ब्याह बहुत होते हैं और यह पटाख़े इसी वजह से छोड़े जा रहा हैं।

डेविड रोज़न के घर से बहुत दूर जार्डन नदी के उस पार छोटी छोटी रौशनियां नज़र आ रही थीं। इन रौशनियों के बारे में डेविड ने बताया कि यह जार्डन की राजधानी उम्मान की बिल्डिंगों की रौशनी है। फिर डेविड ने हम लोगों को एक बहुत बड़ी दूरबीन के ज़रिये इन रौशनियों को देखने के लिए कहा। इस दूरबीन से

उम्मान की कई मस्जिदों के मीनार साफ़ साफ़ नज़र आने लगे। कुछ देर बाद खाना शुरू हुआ। अंगूर की शराब की प्रशंसा तो की गई लेकिन आज के सबाथ में शराब नहीं परोसी गई बल्कि अंगूर का जूस हम लोगों के सामने रखा गया। सब खाने की मेज़ पर बैठ गए लेकिन शिष्टमंडल के एक सदस्य नहीं बैठे जब उनसे पूछा गया कि वह क्यों खाना नहीं खा रहे हैं? तो उन्होंने कहा कि मेरा रोज़ा है। इस पर डेविड रोज़न ने हैरत से कहा ''रोज़ा? मुसलमान तो दिन में रोज़ा रखते हैं और अब तो रात हो चुकी है?'' इस पर उक्त सदस्य ने कहा कि वह पिछले चालीस वर्षों से हर शुक्रवार की रात को शाम 6 बजे से सुबह 6 बजे तक रोज़ा रखते हैं। असल में मौलाना ने सुबह ज़्यादा खाना खा लिया था और उनको दस्त व मतली की शिकायत हो गई थी, मगर वह यह बात अपने मेज़बान को बताना नहीं चाहते थे। शिष्टमंडल के अन्य सदस्य मौलाना द्वारा बनाए गए बहाने पर हंस हंस कर लोट पोट हुए जा रहे थे।

पश्चिमी किनारे की यात्रा

शनिवार को यहूदी धर्म के लोगों के लिए संसार के काम काज करने पर प्रतिबंध है। यहूदियों की कुछ कॉलोनियाँ ऐसी भी हैं कि जहाँ शनिवार को रेडियो, टेलिविज़न और संगीत पर प्रतिबंध रहता है यहाँ तक कि गाड़ियों को भी वहाँ चलने फिरने की इजाज़त नहीं होती। कुछ लोगों ने बताया कि अगर सबाथ के दौरान कोई वाहन इन क्षेत्रों से गुज़र जाए तो उस पर कट्टर पंथी यहूदी पथराव कर देते हैं, इसी बात को ध्यान में रखते हुए शिष्टमंडल को बुलाने वालों ने शनिवार को भारतीय दल को पश्चिमी किनारे ले जाने का कार्यक्रम रखा था। हम सभी बहुत बेचैनी से रमल्ला जाने के लिए बेक़रार थे। सुबह 9 बजे एक बस हमारे होटल के बाहर आ गई लेकिन यह बस उस बस से काफ़ी अलग थी। उस पर माया ट्रांस्पोर्ट लिखा रहता था इस बस पर अरबी भाषा अल-क़ुद्स लिखा था। यह किसी फिलिस्तीनी ट्रांसपोर्टर की बस थी। हम लोगों को बता दिया गया था कि आज हमारे साथ शेख़ अब्दुल अज़ीज़ बुख़ारी नहीं आएँगे और हमारा गाइड सोलोमन भी केवल रमल्ला की सीमा तक ही जाएगा। जब हम बस में सवार हुए तो हमको यह देख कर काफ़ी आश्चर्य हुआ कि हमारी बस में एरन लरमैन भी मौजूद है। पहले से बने प्रोग्राम के अनुसार लरमैन को शाम को आना था लेकिन उस ने हमारे फिलिस्तीनी क्षेत्रों में जाने से पहले ही अपनी मज़लूमी की झूठी दास्तान सुनाने का निर्णय लिया। वह एक गाइड की तरह ही हम को विभिन्न चीज़ों के बारे में समझा रहा था। हालाँकि हमारा गाइड सोलोमन भी (जिस के बारे में मुझे यक़ीन था कि वह भी इस्राईल की सरकार का ही जासूस था क्योंकि उस के पास एक ऐसा कार्ड था जिस को वह जहाँ भी दिखाता था पुलिस और सैनिक दस्ते

उसको आगे जाने की इजाज़त दे देते थे) हम को वह बातें बता सकता था जो एरन बताना चाहता था लेकिन एरन लरमैन ने बस में रखा माइक अपने हाथ में ले लिया। यरोशलम के रास्तों से गुज़रते हुए हम लोग एक पहाड़ी पर पहुँच गए यहाँ से पूरा यरोशलम दिखाई दे रहा था और जार्डन नदी के उस पार उम्मान नगर की मस्जिदों के मीनार भी दिखाई दे रहे थे। दिलचस्प बात यह थी कि हम जिस पहाड़ी पर एक शैतान के साथ खड़े थे उस पहाड़ी का नाम Hill of the evil council है। इत्तिफ़ाक़ से इसी पहाड़ी पर संयुक्त राष्ट्र संघ का कार्यालय भी है और किसी ज़माने में यहीं पर ब्रिटेन का उच्चायोग भी था। इस पहाड़ी पर खड़े हो कर हम लोग पश्चिमी और पूर्वी यरोशलम की बस्तियाँ देख सकते थे। एरान ने हम लोगों से कहा कि यरोशलम में यहूदी हमेशा से बड़ी संख्या में रहते आए हैं। यह सच बात थी क्योंकि यहाँ के मुसलमानों ने यहूदी समुदाय को कभी हानि नहीं पहुँचाई लेकिन यह भी सच है कि यहूदियों ने बीसवीं शताब्दी की शुरुआत में यहाँ एक साज़िश के तहत बसना शुरू किया। यहाँ तक कि उसमानी ख़िलाफ़त तक इस साज़िश को समझ नहीं पाई। जब तक मुसलमान इस साज़िश को समझ पाते बहुत देर हो चुकी थी और बात यहाँ तक पहुँच गई कि 1948 में पश्चिमी यरोशलम में यहूदी आबादी के हिसाब से आगे हो गए। यह भी एक कडवा सच कि 1967 के युद्ध से पहले पूर्वी यरोशलम में कोई यहूदी नहीं था लेकिन अरब इस्राईल लड़ाई के बाद यहूदी समुदाय ने ताक़त के बल पर मुसलमानों की ज़मीनें छीन लीं और अपनी बस्तियाँ बसा लीं। अब पूर्वी यरोशलम में 1लाख 86 हज़ार यहूदी रहते हैं जिनके लिए 59 हज़ार मकान बनाए गए हैं। इस क्षेत्र में सैंकड़ों फिलिस्तीनी मुसलमानों के मकानों को गिरा कर हरित क्षेत्र बना दिया गया है। इस के विपरीत मुस्लिम इलाक़ों का यह हाल है कि

एक और दो कमरे के 32 हज़ार घरों में 2 लाख 80 हज़ार लोग ज़िंदगी गुज़ारते हैं अगर आप हिसाब लगाएँ तो पता चलेगा कि एक एक कमरे से 5 से 8 लोग रहने पर मजबूर हैं।

शैतान के परामर्श वाली चोटी से उतर कर हम लोगों को एरान लरमैन ने फिलिस्तीनी एथारिटी और ईस्राइली क्षेत्रों को अलग करने वाली दीवार दिखाई। इस दीवार के आस पास जहाँ जहाँ आबादी है वहाँ तो कंकरीट की मज़बूत दीवार है लेकिन जहाँ पर आबादी नहीं है वहाँ पर काँटेदार तार लगाए गए हैं जिन में बिजली का करंट दौड़ता रहता है। एरान ने कहा कि इस दीवार का केवल एक ही उद्देश्य है और वह यह कि यहूदी जनता को फिलिस्तीनी क्षेत्र से होने वाली फ़ायरिंग से बचाया जा सके। एरान ने कहा कि दूसरा इन्तेफ़ाज़ा (uprising) आंदोलन सिर्फ़ एक प्रचार मात्र था। वह आंदोलन यहूदी लोगों पर हमला करने का एक बहाना था। हम ने इस दीवार के ज़रिये ईस्राइली नागरिकों पर होने वाले हमलों को रोकने में सफलता पाई है। लरमैन ने कहा कि इस के अलावा हम ने गहन तलाशी अभियान के ज़रिये आत्मघाती हमलावरों को रोकने में भी कामयाबी हासिल की है। हमारे मुख़बिरों ने भी इस में बहुत मदद की है।

जहाँ हम लोग खड़े थे उस को बैत-उ-जिला गाँव कहा जाता है इस क्षेत्र में इस्राईल ने 1970 में यहूदियों को (जबरन) बसा दिया था। ईस्राइली लोगों का कहना है कि फिलिस्तीनी क्षेत्रों से इस कॉलोनी पर लगातार फ़ायरिंग होती रहती है लेकिन फिलिस्तीनी नागरिकों का कहना था कि इस इलाक़े में रहने वाले सभी यहूदी अपने पास हर समय हथियार रखते है। यह लोग ज़रा ज़रा सी बात में गोली मार देते हैं और यहूदी वर्ग का यही रवैया क्षेत्र में तनाव बने रहने का असल कारण है।

इस अवसर पर पी टी आई के संवाददाता ज़ीशान हैदर ने एरान

से पूछा कि इंटरनैशनल कोर्ट ऑफ़ जस्टिस ने इस्राईल की सरकार से कहा था कि वह इस दीवार को गिराए। इस्राईल ने उस का आदेश क्यों नहीं माना? इस सवाल का जवाब देते हुए एरान ने बहुत ही बेशरमी से कहा कि वह ICJ की राय थी और यह हमारा अधिकार है कि हम ईस्राइली नागरिकों की सुरक्षा करें। एरान ने यह भी कहा कि International Court of Justice ने हम से यह भी कहा था कि हम 1967 की सीमा में वापस जाएँ लेकिन हम ने इस्राईल के हितों को ध्यान में रखते हुए ICJ के निर्णय को मानने से इन्कार कर दिया था क्योंकि इस क्षेत्र में बसे 5 लाख यहूदियों को वहाँ से हटाना संभव नहीं है। उस ने यह भी कहा कि ईस्राइली संसद के 120 सदस्यों में से 9 सदस्य इस बात पर विश्वास रखते हैं कि तलअबीब से ले कर जार्डन नदी तक का सारा इलाक़ा इस्राईल की मिलकियत है। इन सदस्यों का विचार है कि फ़िलिस्तीन का यहाँ कोई स्थान नहीं है। बैत-उल-जिला से हम लोग थोड़ी देर बाद रमल्ला के लिए रवाना हुए तो एरान बस से उतर कर अपने घर चला गया।

डेढ़ घंटे के बाद हमारी बस रमल्ला की सीमा पर पहुँची वहाँ बनी सुरक्षा चौकी पर हमारा गाइड सोलोमन भी बस से उतर गया फिर हमारे ड्राइवर ने वहाँ मौजूद ईस्राइली सैनिकों को कुछ पेपर दिखाए तो उन्होंने हमारी बस को आगे जाने कि इजाज़त दे दी। फिलिस्तीनी एथारिटी के इलाक़े में दाख़िल होते ही भारतीय मिशन की एक कार हमारी बस के पास रुकी और उस में से एक सरदार जी एक अन्य अधिकारी के साथ उतरे, इन लोगों ने हम से लोगों से हाथ मिलाया और शिष्टमंडल का स्वागत किया। फिर हमारी बस उन ही लोगों की कार के पीछे ही चल पड़ी। रमल्ला में दाख़िल होते ही हम को इस्राईल और यहाँ के जीवन में एक ख़ास फ़र्क़ नज़र आने लगा। दुकानों पर हिबरू के बजाए अरबी भाषा में

बोर्ड लगे थे। सड़कों पर भीड़ भाड़ बिल्कुल नहीं थी। जगह जगह फिलिस्तीनी एथारटी के सिपाही खड़े थे। सड़कों पर महिलाएँ बिल्कुल नहीं थीं और अगर एक आध नज़र आ भी रही थी तो वह परंपरा गत रूप से पर्दा किए हुए थी। थोड़ी देर में हम लोग भारतीय दूतावास के प्रतिनिधि के कार्यालय पहुँच गए। यहाँ राजदूत के प्रतिनिधि श्री ज़िकर-उर-रहमान ने हम लोगों का बहुत गर्मजोशी से स्वागत किया। उनके कार्यालय में फिलिस्तीनी एथारिटी के विदेश उपमंत्री, स्वयं सेवी संगठनों के अनेक प्रतिनिधि तथा कई सामाजिक कार्यकर्ता वहाँ भारतीय दल से मिलने के लिए पहले से उपस्थित थे। सब से पहले हम लोगों को एक फिलिस्तीनी NGO के प्रतिनिधियों से मिलवाया गया यह संगठन The Grassroots Palestinian Anti-Apartheid Wall Compaign के नाम से उस रंगभेदी दीवार के ख़िलाफ़ आंदोलन चला रहा है जो इस्राईल की सरकार फिलिस्तीनी क्षेत्रों में खड़ी कर रही है। इस NGO के लोगों ने हम लोगों के एक स्लाइड शो के ज़रिये इस्राईल की ओर से ढ़ाए जा रहे वह ज़ुल्म दिखाए जिन को देख कर पत्थर का दिल रखने वाले व्यक्ति की आँख से भी आँसू निकल पड़ें। बच्चों व औरतों की लाशें, तबाह किए गए मकान, जले हुए घर, उजड़ी हुई मंडियाँ, बरबाद दुकानें और नष्ट की गई फ़सलें। सब ईस्राइली सरकार का तोहफ़ा। उसी इस्राईल का तोहफ़ा जो जगह जगह अमन का ढोल पीट रहा है। वही ईस्राइली सरकार जो झूठ मूठ की शांति का नाटक कर रही है ताकि अपनी विस्तारवादी नीतियों को इस शांति की आड़ में पूरा कर सके और फिलिस्तीनी लोगों की नस्ल को ख़त्म करने का काम आसानी से कर सके। इस NGO के संचालक जमाल जुम्मा ने शिष्ट मंडल को बताया कि 700 फ़िट लंबी यह दीवार रंगभेद का प्रतीक है। इस दीवार के द्वारा फ़िलिस्तीन के लोगों की ज़िंदगी

में मुश्किलें खड़ी कर रही है। हमारे परिवारों को इस दीवार के द्वारा बाँट दिया गया है जिन क्षेत्रों में हम कभी सिर्फ़ दस मिनट में पहुँच जाते थे वहाँ तक पहुँचने में अब हम को डेढ़ से दो घंटे लग जाते हैं। रमल्ला से यरोशलम तक जाने में पहले सिर्फ़ पंद्रह मिनट लगते थे लेकिन अब हम को डेढ़ घंटा लगता है। इस दीवार के बारे में अगर लिखने बैठूँ तो पूरी किताब इसी पर हो जाएगी। जो पाठक इस दीवार के बारे में तफ़सील से जानना चाहते हैं वह jamal@stopwall.org पर ई मेल द्वारा संपर्क कर सकते हैं इसी के साथ आप फ़िलिस्तीन के लोगों के साथ हमदर्दी का इज़हार भी कर सकते हैं।

इस के बाद लंच की मेज़ पर हम लोगों को फ़िलिस्तीन के विदेश उपमंत्री डॉक्टर अहमद सुबूह से बात करने का मौक़ा मिला। उन्होंने हम लोगों से काफ़ी देर तक बात की। उन्होंने कहा कि इस्त्राईल की अपनी कोई नीति नहीं है वह तो बस अमरीका के पीछे चलता है। इस्त्राईल हमारे साथ ऐसा बर्ताव करता है कि जैसे हम इस क्षेत्र के मूल निवासी नहीं बल्कि विदेशी नागरिक हैं। उन्होंने कहा कि इस्त्राईल ने हमारे साथ किए गए वायदे पूरे नहीं किए इस लिए लोगों का झुकाव हमास की तरफ़ हो गया। अहमद सुबूह ने कहा कि इस्त्राईल ने महमूद अब्बास की बातों को संजीदगी से नहीं लिया इस लिए हम कमज़ोर हुए। उन्होंने यह भी कहा कि हम हमास के ख़िलाफ़ नहीं हैं। हमास को एक राजनीतिक पार्टी का दर्जा मिलना चाहिए। हम उस की सियासी हैसियत का सम्मान करते हैं लेकिन हम लोग हमास को शक्ति के बल पर सत्ता हथियाने नहीं देंगे। अहमद सुबूह ने इस बात को स्वीकार किया कि हमास की लोकप्रियता का एक अहम कारण यह है कि उसने उच्च कोटि की शहरी सुविधाएँ और भ्रष्टाचार मुक्त समाज अपने नागरिकों को दिया है। उन्होंने चुनावों में अपनी हार

स्वीकार करते हुए कहा कि हम इस्राईल की ग़लत नीतियों की वजह से चुनाव में नाकाम रहे। (यहाँ पर यह बात कहना ज़रूरी है कि हमास के लोग अल-फ़तह के इसी लिए ख़िलाफ़ है कि अल-फ़तह इस्राईल की सरकार के इशारों पर नाच रही है) अहम्द सुबूह ने कहा कि इस्राईल शांति के मामले में संज़ीदा नहीं है। वह दुनिया को अमन के नाम पर गुमराह करना चाहता है। उन्होंने कहा कि मैं आपके माध्यम से दुनिया के सभी देशों से निवेदन करना चाहता हूँ कि इस्राईल जब तक शांति समझौता न करे उसे अमन प्रक्रिया का लाभ उठाने की अनुमति नहीं दी जाना चाहिए। मैंने अहमद सुबूह से टोनी ब्लेयर के शांति मिशन के बारे में पूछा तो डॉक्टर सुबूह ने कहा कि ब्लेयर आए, बातें कीं और चले गए, मगर नतीजा कुछ नहीं निकला। वह हम को आर्थिक सहायता और व्यापार समझौतों की लालच देने लगे लेकिन हम ने उन से दो टूक शब्दों में कह दिया कि हम को स्वाधीनता पहले चाहिए है और आर्थिक व व्यापारिक लाभ बाद में।

जब मैंने उनसे यह पूछा कि उनकी नज़र में इस्राईल और फ़िलिस्तीन के मामले का हल क्या है तो उन्होंने कहा कि मेरे ख़्याल में इस समस्या के तीन ही समाधान हैं पहला तो यह है कि इस्राईल यहाँ यथास्थिति बनाए रखे और अपनी ताक़त के बल पर अकड़ता रहे लेकिन इस परिस्थिति में वह शांति के साथ नहीं रह सकता। दूसरा रास्ता यह है कि इस्राईल खुल कर इस बात की घोषणा कर दे कि वह फ़िलिस्तीन की धरती को ख़ाली नहीं करेगा और एक ऐसे यहूदी देश की स्थापना करेगा जिसमें फिलिस्तीनियों को अल्पसंख्यक समुदाय का दर्जा प्राप्त होगा लेकिन यह रास्ता अगर खुला होता तो इस्राईल बहुत पहले ऐसा कर चुका होता। इस समस्या का तीसरा समाधान यह है कि इस्राईल एक आज़ाद फ़िलिस्तीन देश बनाए जाने की घोषणा करे और दो राष्ट्रों की

विचार-धारा को स्वीकार करे। यही एक मात्र विकल्प है इस्राईल के पास इस क्षेत्र में शांति स्थापित करने के लिए।
अंत में डॉक्टर सुबूह से मैंने पूछा कि हिज़्ब उल्लाह के बारे में आप का क्या विचार है? तो उन्होंने कहा कि हिज़्ब उल्लाह हमारे लिए एक मॉडल संगठन का दर्जा रखती है, उस ने हम को सिखाया है कि इस्राईल को कैसे मात दी जा सकती है।
डॉक्टर सुबूह लंच के बाद चले गए मगर अनेक फिलिस्तीनी वहाँ रुके रहे। हम लोगों ने उन से बातें शुरू कर दीं। एक फिलिस्तीनी ने कहा कि यह मामला धार्मिक नहीं है बल्कि यह ज़ालिम और मज़लूम के बीच के संघर्ष का मामला है कुछ लोगों ने इसको धर्म के जोड़ दिया है (हमास,ईरान और हिज़्ब उल्लाह का मानना है कि यह इस्लाम और यहूदीयत की लड़ाई है)। एक अन्य नवयुवक ने कहा इस्राईल चाहता है कि अरब देशों से रिश्ते भी स्थापित हो जाएँ और फिलिस्तीनियों को उनके अधिकार भी देना न पड़ें। उसने कहा कि इस्राईल झूठ मूठ के लिए शांति शिष्टमंडल लाता रहता है। इस शिष्टमंडल से पहले वह कुछ अरब नागरिकों को ले कर आया और इस को अरब लीग का शिष्टमंडल कह कर दुनिया को गुमराह करने की कोशिश की। बाद में अरब लीग ने इस बात का खंडन किया कि उस का कोई शिष्टमंडल इस्राईल गया था। वह शतरंज की चालों की तरह अमन के मोहरों को आगे पीछे करता रहता है। उसको शांति या अमन से कुछ लेना देना नहीं, इस्राईल को तो बस इस धरती पर अपना क़ब्ज़ा बनाए रखने में दिलचस्पी है। उसे अमन से कोई सरोकार नहीं। सोचिए वह इतनी उपजाऊ ज़मीन को कैसे छोड़ सकता है? इस क्षेत्र में इतने बड़े जल स्रोत हैं जिन से इस्राईल अपने नागरिकों को जल की 70% आपूर्ति करता है। यह जल हमारा है लेकिन हमारे बच्चों को इस्राईल पानी के लिए तरसाता हैं। हमारे क्षेत्र में सप्ताह में सिर्फ़

दो दिन पानी सप्लाई किया जाता है।
उस फिलिस्तीनी ने यह भी बताया कि इस क्षेत्र में पैदा होने वाली सब्ज़ियाँ भी इस्राईल की जनता की 90% आवश्यकताओं को पूरा करती हैं। इस के अलावा वह Dead Sea से निकलने वाले बहुमूल्य खनिजों और रत्नों को भी बहुत बेदर्दी से लूट रहा है। इस लिए दुनिया वाले यह उम्मीद न रखें कि इस्राईल इतनी आसानी से इन क्षेत्रों को छोड़ देगा। वह शिकस्त खाए बिना यह धरती नहीं छोड़ेगा।
अरब स्टडीज़ सोसाइटी के एक सदस्य ख़लील एम तफ़क्ग़ी ने कहा कि इस्राईल एक तरफ़ तो अमन के डेलिगेशन ला रहा है और दूसरी तरफ़ फिलिस्तीनी जनता पर लगातार अत्याचार कर रहा है। इसी साल जनवरी से अगस्त तक उस की सेनाओं से सैंकड़ों मकानों और दुकानों को तबाह कर दिया है, लेकिन अफ़सोस की बात तो यह है कि इस का समाचार तक प्रसारित या प्रकाशित नहीं हुआ। यहाँ फिलिस्तीनियों का सामूहिक नरसंहार हो रहा है, परंतु अंतर्राष्ट्रीय बिरादरी भी इस्राईल का साथ दे रही है। ख़लील ने यह भी बताया कि 2007 में सिर्फ़ जुलाई के महीने में ही फ़ायरिंग की 222 घटनाएँ हुई जिसमें 32 फिलिस्तीनी शहीद और 113 घायल हुए। 391 युवकों को पुलिस ने गिरफ़्तार किया। फिलिस्तीनी क्षेत्रों में 409 नए चेक पोस्ट बनाए ताकि फिलिस्तीनी जनता को परेशान किया जा सके। 668 बार ईस्राइली सेना ने फिलिस्तीनी गाँवों और शहरों में घुस कर औरतों की बेइज़्ज़ती की। 145 मार्गों पर फिलिस्तीनी जनता के आवागमन पर पाबंदी लगाई गई। 39 बार इस्राईल की सेना ने हमला करके अनेक घरों को बरबाद किया। ख़लील ने यह भी बताया कि अगस्त 2007 के पहले सप्ताह में भी 5 फिलिस्तीनी शहीद और 21 घायल हुए। 49 लड़कों को पुलिस उठा कर ले गई। एक बूढ़ी औरत ने जब

अपने बेटे को गिरफ़्तारी से बचाने की कोशिश की तो उस को भी ईस्राइली सेना ने शहीद कर दिया। ख़लील ने कहा कि इस्राईल की सरकार ने मुसलमानों के लिए कई मार्ग बंद कर दिए हैं, इन सड़कों पर सिर्फ़ यहूदी चल सकते हैं।
एक अन्य युवक ने भारतीय शिष्टमंडल के लोगों से कहा कि अच्छा हुआ आप के साथ शेख़ अब्दुल अज़ीज़ बुख़ारी नहीं आए। वह इस्राईल के एजेंट और सरकारी मुल्ला हैं। वह यहाँ आते तो शायद उन पर हमला हो जाता। शेख़ ने अपना घर पेरिज़ शमऊन के हाथ बेच कर फिलिस्तीनी जनता से ग़द्दारी की है।

ईसाइयों का दर्द

जब भारतीय शिष्टमंडल रमल्ला से वापस यरोशलम की ओर चलने को तैयार हुआ और हम भारतीय मिशन की बिल्डिंग से बाहर निकले तो पता चला कि हम लोगों की बस ख़राब हो गई है और रमल्ला से बाहर निकलने में अभी एक घंटा और लगेगा। यह सूचना हम पत्रकारों के लिए एक अच्छी ख़बर थी क्योंकि हम लोगों को अपने फिलिस्तीनी भाइयों से बात करने का कुछ और मौक़ा मिल गया। इस अवसर का फ़ायदा उठाते हुए हम लोग जमाल जुम्मा से फिर बात करने लगे । जमाल ने बताया कि बैत-उल-मुक़दद्स (मस्जिद-ए-अक़्सा) की बरबादी के लिए इस्राईल की ओर से बहुत गहरी साज़िश रची जा रही है और अगर मुस्लिम देशों ने ज़रा भी अनदेखी की तो मस्जिद-ए-अक़्सा का भी वही हाल होगा जो भारत में बाबरी मस्जिद का हुआ। जमाल जुम्मा ने अपने Laptop पर इस्राईल के अनेक कट्टर पंथी संगठनों की Website दिखाई जिसमें मस्जिद-ए-अक़्सा के स्थान पर Temple Mount दिखाया गया था। इस वेबसाईट में Animation के ज़रिये कई बार दर्शाया गया था कि मस्जिद-ए-अक़्सा ग़ायब हो जाती है और उसकी जगह यहूदी धर्मस्थल खड़ा नज़र आता है। जुम्मा ने कहा कि यहूदियों का असली ख़्वाब यही है कि मस्जिद तबाह हो जाए। इसी उद्देश्य से मस्जिद के नीचे सुरंगें भी खोदी जा रही हैं।

जमाल जुम्मा ने बताया कि इस्राईल बनाए जाने का डिकलेरेशन 1917 में पास हुआ और 1918 में फ़िलिस्तीन ब्रिटेन के कब्जे में चला गया। इसी के बाद यहूदी एक सुनियोजित साज़िश के तहत फ़िलिस्तीन में बसने लगे। इस अतिक्रमण के ख़िलाफ़ फिलिस्तीनी लगातार विरोध प्रदर्शन करते रहे। 1919 में यहाँ ब्रिटेन के कब्जे

के ख़िलाफ़ उपद्रव हुआ लेकिन ब्रिटेन की शक्तिशाली सेना के आगे हमारी एक न चली। दस साल बाद फिलिस्तीनियों ने यहूदियों को बसाए जाने के ख़िलाफ़ फिर विद्रोह किया लेकिन नाकाम रहे। इस के दो साल बाद 1931 में हैफ़ा में फिलिस्तीनी क़ौम फिर उठ खड़ी हुई लेकिन इस अकेली क़ौम की मदद के लिए कोई नहीं आया। संचार माध्यमों पर ब्रिटेन और अमरीका के कब्जे की वजह से इस तरह के विद्रोह की ख़बर दुनिया के दूसरे मुल्कों में रहने वाले लोगों तक नहीं पहुँच सकीं। इन नाकाम बग़ावतों के दौरान मुसलमानों के 531 गाँव और कस्बे तबाह किए गए और इन में रहने वाले आठ लाख लोग बे घर हो गए। हज़ारों को शहीद किया गया। 1948 तक यहाँ सिर्फ़ 6 लाख यहूदी थे लेकिन अब उन की तादाद 55 लाख से ज़्यादा हो चुकी है। उन्होंने यह भी कहा कि इस्त्राईल ने मध्य एशिया में अमरीका की सभ्यता और (नग्न) जीवन शैली को फैला दिया है क्योंकि वह पूर्वी सभ्यता और संस्कार समाप्त करना चाहता है।

मुसलमान फिलिस्तीनियों के साथ हम लोगों से मिलने के लिए कुछ ईसाई भी आए हुए थे, उन में से एक ईसाई नेता श्री निकोरा ने हम को बताया कि उनका संबंध फ़िलिस्तीन के नज़ारत क्षेत्र से है (नज़ारत फ़िलिस्तीन का ईसाई बाहुल्य क्षेत्र है)। ईसाई नेता श्री निकोरा ने इस्त्राईल की ज़ोर ज़बरदस्ती की पॉलिसी की आलोचना करते हुए कहा कि हम इस देश में तीसरे दर्जे के शहरी बन गए हैं। यहूदियों की यही कोशिश है कि वह यहाँ बसी तमाम क़ौमों को उजाड़ कर ज़्यादा से ज़्यादा ज़मीन हासिल कर लें ताकि भविष्य में अधिकाधिक यहूदियों को यहाँ आबाद कर सकें। उन्होंने खेद जताते हुए कहा कि इस्त्राईल की सरकार ईसाइयों पर भी ज़ुल्म कर रही है लेकिन अत्यंत दुख की बात है कि अमरीका और ब्रिटेन की सरकारें मुसलमानों की दुश्मनी में ईसाइयों के हितों

की अनदेखी कर के उन्हें अत्याचारों का शिकार होते हुए देख रही हैं और इस्राईल की शर्मनाक तौर पर सहायता कर रही हैं। उन्होंने कहा कि ईस्राइली कनेसेट के एक ईसाई सदस्य डॉक्टर आज़मी पिशारा को संसद की सदस्यता से इस लिए निकाल दिया गया कि उन्होंने एक ऐसे धर्मनिरपेक्ष देश की स्थापना की वकालत की थी जिसमें तीनों मज़हबों के लोगों को बराबर के अधिकार प्राप्त हों। उन्होंने कहा कि ज़ाहिर है यहूदी कभी इस बात को पसंद नहीं करेंगे कोई उनकी उस धरती का विरोध करे जिसका वायदा उनकी पवित्र किताब तौरैत में किया गया है। यहूदी किसी भी सेक्युलर सरकार की बात कैसे मान सकते हैं? श्री निकोरा ने कहा कि अगर इस्राईल की ओर से अत्याचार और दमन का सिलसिला यूँ ही जारी रहा तो वह दिन दूर नहीं कि सारे फिलिस्तीनी हमास के साथ हो जाएँगे और इस्राईल का वजूद ख़तरे में पड़ जाएगा क्योंकि हमास इस्राईल के अस्तित्व को स्वीकार नहीं करती है। उन्होंने बताया कि हमास का ज़ोर इतना बढ़ गया है कि पिछले चुनाव में पूर्वी यरोशलम की चारों सीटों पर हमास का क़ब्ज़ा हो गया था।(पूर्वी यरोशलम के नागरिकों को इस बात का अधिकार दिया गया है कि वह फिलिस्तीनी एथारिटी के चुनाव में वोट दें) उन्होंने कहा कि पश्चिमी किनारे पर भी हमास दिन प्रति दिन लोक प्रिय होती जा रही है और हो सकता है अल-फ़तह यहाँ से भी जल्द ही ग़ायब हो जाए।

इस बीच हमारी बस ठीक हो गई और हम लोग फिर यरोशलम की तरफ़ चल पड़े। इस्राईल में हम लोगों का जो कार्यक्रम निर्धारित था उसके अनुसार हम लोगों को रमल्ला से वापसी के बाद डिनर करना था और फिर Western Wall Tunnel देखने के लिए जाना था। यह दीवार चार हज़ार साल पुरानी है और दीवारे गिरया (Wailing Wall) के ठीक नीचे है। भारतीय शिष्ट

मंडल वहाँ निर्धारित समय पर पहुँच गया। हम लोगों को बड़ा आश्चर्य था कि इस्राईल के अधिकारी इस बात पर राज़ी हो गए कि वह एक विदेशी शिष्टमंडल (जिसमें तीन पत्रकार शामिल है) को वह सुरंग दिखाने पर राज़ी हो गई है जहाँ उस की ओर से कुछ ख़ुफ़िया काम भी चल रहा है। हम लोग सुरंग के बाहर इन्तिज़ार ही करते रहे इसे देखने की नौबत नहीं आई रात 11 बजे तक ईस्राइली अधिकारी यही कहते रहे कि Tunnel की चाबी जिस अधिकारी के पास है वह कहीं गया हुआ है। अंत में भारतीय शिष्टमंडल को ख़ाली हाथ ही लौटना पड़ा।

दूसरे दिन सुबह को हिंदुस्तानी शिष्टमंडल को इस्राईल के शरीयत कोर्ट (Israel Supreme Sharia Court) में ले जाया गया। इस शरीयत कोर्ट के अध्यक्ष काज़ी अहमद नासौर हैं। शरीयत कोर्ट में मुसलमानों के शादीब्याह, तलाक़ और जायदाद से जुड़े झगड़ों को हल किया जाता है। यहाँ दिए गए फ़ैसलों को क़ानूनी मान्यता भी प्राप्त होती है। लेकिन यह अदालत भी सिर्फ़ एक धोखा है क्योंकि जहाँ मुसलमानों के बच्चे बिना मुकदमा चलाए जेलों में रखे जाते हों, जहाँ ज़रा ज़रा सी ख़ता पर गोली मार देना आम बात हो, वहाँ इस तरह की झूठ मूठ की अदालत किस काम की। यह काम तो हमारे देश में मुस्लिम क़ाज़ी किया करते हैं। यह अदालत मुस्लिम पर्सनल लॉ बोर्ड जैसा एक संगठन है। इस का इस से ज़्यादा कोई महत्व नहीं है। इस अदालत के अध्यक्ष क़ाज़ी नासौर ने यह बात स्वीकार करते हुए कहा कि हमारे अधिकार बहुत सीमित हैं और इस्राईल की सरकार इस अदालत के लिए इतना कम धन देती है कि उस से बिल्डिंग का किराया और स्टाफ़ का वेतन भी मुश्किल से ही अदा हो पाता है। फिर भी हमारे डेलिगेशन के एक सदस्य मौलाना बहुत खुश हो रहे थे, (हालाँकि उन्हें इस अदालत का सिर्फ़ साइनबोर्ड देखने का

ही मौक़ा मिला था) मौलाना ने डींग मारते हुए कहा कि वह हिंदुस्तान में भी ऐसी ही अदालतें स्थापित किए जाने की कोशिश करेंगे।

जब तक भारतीय डेलिगेशन काज़ी नासौर से बातें करता रहा हम तीनों पत्रकार शरीयत कोर्ट के Computer पर अपने अपने दफ़्तरों के लिए रिपोर्ट टाइप करते रहे। शरीयत कोर्ट के मुस्लिम कर्मचारी हम लोगों की बहुत ख़ातिरदारी कर रहे थे, बार बार चाय व काफ़ी ला रहे थे। शायद उन मज़्लूमों को लग रहा था कि हम अपने वतन वापस जा कर फिलिस्तीनी जनता के दुख दर्द को पूरी सच्चाई से बयान करेंगे।

चीफ़ रब्बाईयों से समझौता

शरीयत कोर्ट से निकलने के बाद भारतीय शिष्टमंडल को यहूदी धर्म के सब से बड़े धर्म गुरु के कार्यालय ले जाया गया। इस धर्म गुरु को चीफ़ रब्बाई कहा जाता है। चीफ़ रब्बाई के ऑफ़िस में यहूदी धर्म गुरुओं की एक फ़ौज मौजूद थी। भारतीय डेलिगेशन को इस्राईल के नंबर एक रब्बाई Shlomo Moshe Amar और दूसरे नंबर के धर्मगुरु Yona Metzegar से मुलाक़ात करना थी। यह दोनों धर्म गुरु बड़ी बड़ी रंगीन पगड़ियाँ बाँधे थे (जैसी पगड़ी हमारे देश में जादू का खेल दिखाने वाले मदारी पहनते हैं।) चीफ़ रब्बाई के दफ़्तर में पहुँचने के बाद हम पत्रकारों को पता चला कि भारतीय डेलिगेशन किसी समझौते पर हस्ताक्षर करने वाला है। हम लोग हैरान थे कि ऐसा कौन सा समझौता होने वाला है जिसको इतना गुप्त रखा गया? यहाँ तक कि डेलिगेशन के सदस्यों तक को इस की ख़बर नहीं थी। इसी कारण से मौलाना अफ़ज़ाल निज़ामी ने यह कह कर दस्तख़त करने से इन्कार कर दिया कि उनको समझौते का मसविदा दिखाया नहीं गया था, इसलिए वह हस्ताक्षर नहीं करेंगे। दल के एक और सदस्य ख़्वाजा इफ़तिख़ार ने भी इस समझौते पर हस्ताक्षर करने से इन्कार कर दिया। इस तरह समझौते पर हस्ताक्षर करने वालों में मौलान उमैर इल्यासी और मौलाना हिफ़्ज़-उर-रहमान मेरठी दस्तख़त करने एक लिए मेज़ पर मौजूद थे। यह दृश्य इतना हास्यप्रद था कि कोई भी हंस पड़ता। इस्राईल के दो सब से बड़े धार्मिक रहनुमा भारत के दो गुमनाम मुसलमान नेताओं के साथ एक ही मेज़ पर बैठे थे। पता नहीं यहूदी रब्बाई अपने आप को धोखा दे रहे थे या दुनिया को बेवक़ूफ़ बना रहे थे। असल में भारत में इस डेलिगेशन के इस्राईल जाने के विरोध में जो प्रदर्शन

हो रहे थे उस के कारण यहूदी रब्बाईयों को लग रहा था कि इस डेलिगेशन में शामिल लोगों की मुस्लिम समाज में काफ़ी अहमियत है।

कुछ ही देर में समझौते का मसविदा वितरित किया गया जिस को The Chief Rabbinate of Israel और भारत के एक संगठन तन्ज़ीम-ए-आईम्मा-ए-मसाजिद (भारतीय मस्जिदों के इमामों का संगठन जिसके संचालक मौलाना जमील इल्यासी साहब हैं) के बीच का सहमतिपत्र कहा गया था। इस सहमतिपत्र पर इस्राईल की ओर से दोनों रब्बाईयों और शिष्टमंडल की ओर से मौलाना उमैर इल्यासी व मौलाना मेरठी ने दस्तख़त किए। इस सहमतिपत्र में कहा गया था कि यहूदी और मुसलमान एक ही पैग़ंबर हज़रत इब्राहीम के मानने वाले हैं। इस लिए दोनों के बीच एकता और भाईचारा बढ़ाया जाना चाहिए। (इस सहमतिपत्र में पैग़ंबर हज़रत मोहम्मद का कोई उल्लेख नहीं किया गया था क्योंकि यहूदी उनको पैग़ंबर मानते ही नहीं हैं इसी लिए उन्होंने बड़ी चालाकी से सिर्फ़ हज़रत इब्राहीम का ज़िक्र किया।)

इस सहमतिपत्र में कहा गया था कि हम उन लोगों की भर्त्सना करते हैं जो धर्म के नाम पर क़त्ल व ख़ून का बाज़ार गर्म करते हैं या लोगों को ऐसा करने पर उकसाते हैं। यह इशारा मुसलमानों की ही तरफ़ था जिनको यहूदी आतंकवादी के रूप में पेश करते हैं। इस सहमतिपत्र में कहीं भी फिलिस्तीनी जनता का उल्लेख नहीं था जिनको इस्राईल की सरकार पिछले 60 वर्षों से लगातार आतंक के साये में जीने पर मजबूर कर रही है और उन पर हर तरह के ज़ुल्म भी कर रही है। इस सहमतिपत्र में मस्जिद-ए-अक़्सा का भी कोई उल्लेख नहीं था लेकिन दुनिया भर के लोगों से अपील की गई थी कि वह इस पवित्र धरती पर चल रहे विवाद को हल करने के लिए ठोस क़दम उठाएँ। सहमतिपत्र में दुनिया

भर के लीडरों से तो अपील की गई थी कि वह शांति के लिए पहल करें लेकिन इस सारे मामले की जड़ यानी इस्राईल की सरकार से कुछ नहीं कहा गया था जबकि इस विवाद के हल न होने में सब से बड़ा हाथ इस्राईल की सरकार का है। भारतीय डेलिगेशन की तरफ़ से यह बात भी कही गई कि जिस तरह भारत में यहूदी और मुसलमान अमन चैन से रहते हैं हमारी कोशिश होगी कि हम दूसरी जगहों पर भी यही कोशिश करें कि मुसलमान, यहूदी और ईसाई दूसरी जगहों पर भी चैन से और मिल जुल कर रहें। भारतीय डेलिगेशन यह बात भूल गया कि भारत का इस्राईल से क्या मुक़ाबला? भारत एक धर्मनिरपेक्ष देश है जबकि इस्राईल एक धर्म पर आधारित कट्टर पंथी राज्य है जहाँ दूसरे धर्मों को बराबर के अधिकार प्राप्त नहीं है।
सहमतिपत्र पर हस्ताक्षर होने के बाद भारतीय पत्रकारों को चीफ़ रब्बाई से बात करने की अनुमति मिल गई। मैंने राष्ट्रीय सहारा के प्रतिनिधि की हैसियत से Shlomo Moshe Amar से पूछा कि फिलिस्तीनी लोगों का कहना है कि इस्राईल की सरकार शांति के मामले में Serious नहीं है आप अपने प्रभाव का इस्तेमाल करते हुए इस्राईल की सरकार को इस मामले में संजीदा होने की राय क्यों नहीं देते? इस सवाल का जवाब देते हुए चीफ़ रब्बाई ने कहा कि ईस्राइली कहते हैं फिलिस्तीनी संजीदा नहीं हैं और फिलिस्तीनी कहते हैं ईस्राइली Serious नहीं है लेकिन सच इन दोनों के बीच में कहीं छुपा है। असल में दोनों के बीच शक की दीवार है (चीफ़ रब्बाई ने फिर सारे मामले की ज़िम्मेदारी मुसलमानों पर थोपते हुए कहा) और यह शक का माहौल इस लिए पैदा हुआ है क्योंकि बचपन से लोगों के दिलों में इस्राईल के ख़िलाफ़ ज़हर भर दिया जाता है। इस्राईल के बारे में एक Stereo Type Image बना दी गई है। फिर चीफ़ रब्बाई ने बात बदलते हुए कहा कि अब तो

फिलिस्तीनी ही एक दूसरे को मार रहे हैं जिस की हम को बहुत चिंता है। इसी लिए हम लोग धर्मगुरुओं से बात कर रहे हैं।
उन्होंने फ़िलिस्तीन के लिए कुछ और इलाक़े ख़ाली करने की संभावना से इन्कार करते हुए कहा कि इस्राईल के लोगों का ख़्याल है कि हम लोग पहले ही बहुत कुछ उनको दे चुके हैं अब उन लोगों पर ज़्यादा भरोसा नहीं किया जा सकता। ज़ाहिर है यह सब बातें चीफ़ रब्बाई के दिल में थी जो उन्होंने लोगों के नाम से कहीं।
दूसरे रब्बाई Yona Metzegar ने बीच ही बोलते हुए कहा कि हम ने अबू माज़न (महमूद अब्बास) को एक बेहतरीन तोहफ़े के रूप में ग़ज़्ज़ा दिया। हम लोग चाहते थे कि यह इलाक़ा अमन का प्रतीक बने। ग़ज़्ज़ा की बंजर भूमि को हम ने नरक के दर्जे से निकाल कर स्वर्ग में बदल दिया लेकिन जब हम ने एक समझौते के तहत ग़ज़्ज़ा को ख़ाली किया तो हम को उम्मीद थी कि अबू माज़न हम को अमन के बदले में बम नहीं देंगे लेकिन बहुत ही दुख की बात है कि जिस दिन हम ने ग़ाज़ा को ख़ाली किया, फिलिस्तीनियों ने हमारे 50 धर्म स्थल गिरा दिए। मेरे पास बैठे शेख़ अब्दुल अज़ीज़ ने मेरे कान में कहा कि यह सरासर झूठ है क्योंकि जिस दिन यहूदियों ने ग़ज़्ज़ा को ख़ाली किया था उसी दिन उन्होंने ग़ज़्ज़ा की समस्त कॉलोनियों को बमों से उड़ा दिया था ताकि फिलिस्तीनी उन मकानों में रहने न पाएँ। इस के अलावा जब वहाँ से ईस्राइली सेना चली तो उसने उपजाऊ धरती में हानिकारक रसायन डाल कर ज़मीन को बंजर बना दिया ताकि फिलिस्तीनी इस धरती से एक दाना अन्न पैदा न कर सकें। हाँ यह बात सच है कि उन्होंने अपने धर्मस्थलों को नहीं गिराया क्योंकि उनके धर्म में इसकी अनुमति नहीं है। अब आप खुद ही सोचिए की एक वीरान शहर में बने 50 यहूदी धर्मस्थलों का मुसलमान

करते भी किया?

आतंकवाद की चर्चा करते हुए चीफ़ रब्बाई ने कहा कि लोगों का ख़्याल था कि पहले यही इलाक़ा आतंकवाद से पीड़ित है लेकिन अब आतंकवाद सारी दुनिया में फैल चुक है। हाल ही में आप ने देखा होगा कि इराक में किस तरह यज़ीदी फ़िरक़े के 500 लोगों को आतंकवादियों ने क़त्ल कर दिया। चीफ़ रब्बाई ने कहा कि इस्लाम अमन व शांति का धर्म है लेकिन कुछ लोग उस का दूसरा चेहरा पेश कर के आतंकवाद को बढ़ावा दे रहे हैं। इस तरह के लोग कहते हैं कि अपनी जान देने वाला शख़्स जन्नत में जाएगा। चीफ़ रब्बाई ने तन्ज़ीम-ए-आईम्मा-ए-मसाजिद (मस्जिदों में नमाज़ पढ़ाने वाले मुल्लाओं के संगठन) कहा कि अगर आप आतंकवाद के विरुद्ध ज़बान नहीं खोलेंगे तो आप अल्लाह के सामने इस बारे में जवाबदेह होंगे।चीफ़ रब्बाई ने डेलिगेशन के लोगों की हिम्मत की दाद देते हुए कहा कि मैं आप को मुबारकबाद देता हूँ कि आप ने हिम्मत दिखाते हुए भारत में चल रहे विरोध प्रदर्शन के बावजूद यहाँ आने का कष्ट किया।

रब्बाईयों के साथ चल रही मुलाक़ात के दौरान एक ख़ास बात यह भी रही कि इस में अमरीका की राजधानी वाशिंगटन की एक मस्जिद में नमाज़ का नेतृत्व करने वाले मुस्लिम धर्म गुरु शेख़ यहिया हिंदी भी एक विशेष अतिथि के रूप में मौजूद थे। वह बीच बीच में अमरीका के सेक्युलरिज़्म की प्रशंसा करना नहीं भूलते थे। चीफ़ रब्बाई से मुलाक़ात के आख़िरी पलों में मौलाना उमैर इल्यासी ने चीफ़ रब्बाई से कहा कि भारत की पाँच लाख मस्जिदों में नमाज़ पढ़ाने वाले इमामों के नेता मौलाना जमील इल्यासी ने आप सब (इस्राईल वालों)के लिए अमन और सुलह का पैग़ाम भेजा है। उन्होंने मौलाना जमील इल्यासी का एक संदेश भी पढ़ कर सुनाया। इस संदेश में उन धार्मिक समानताओं का उल्लेख

किया गया था जो मुसलमानों और यहूदियों में एक जैसी हैं।
इस डेलिगेशन की सब से बड़ी कमी यह थी कि उस में ख़्वाजा इफ़तिख़ार के अलावा किसी को अँग्रेज़ी नहीं आती थी इस लिए डेलिगेशन की कोआरडिनेटर प्रिया टंडन ही अनुवाद की ज़िम्मेदारी निभा रही थीं। प्रिया के आधे अधूरे अनुवाद की वजह से दोनों तरफ़ के लोगों को पूरी बात समझ में नहीं आती थी। इस लिए कई बार ख़्वाजा इफ़तिख़ार अनुवाद का काम अपने हाथ में ले लेते थे।
इस अवसर पर भारतीय दल ने बहुत क़ीमती तोहफ़े पेश किए। जवाब में चीफ़ रब्बाई ने भी उमैर इल्यासी को सोने चाँदी का बना हुआ यरोशलम का छोटा सा मॉडल भेंट किया। इस मॉडल को हाथों में उठा कर शिष्टमंडल के एक सदस्य ने बहुत ही जोश से कहा कि अब हम अमन का यही संदेश ले कर दुनिया भर में जाएँगे। मुझे उनकी यह बात सुन कर बहुत हँसी आई। मैं सोचने लगा कि जो लोग अपने ही देश के मुसलमानों की जनसभाओं में इस्राईल के साथ शांति वार्ता की बात कहने की हिम्मत नहीं जुटा सकेंगे वह भला दुनिया भर में किस मुँह से यह बात कहेंगे?

शमऊन पेरेज़ से मुलाक़ात

इस्राईल के रब्बाईयों से मिलने के बाद भारतीय दल के लोग शाम को इस्राईल के राष्ट्रपति शमऊन पेरेज़ से मुलाक़ात करने के लिए शमऊन के घर पहुँचा। यहाँ भी कड़ी तलाशी और आधे घंटे के इन्तिज़ार के बाद ही दल के लोग अंदर दाख़िल हो सके। इस अवसर पर इस्राईल की ख़ुफ़िया सर्विस के लोग और विदेश मंत्रालय के अनेक अधिकारी मौजूद थे। एरान लरमैन भी यहाँ बैठा हुआ था।

शमऊन पेरेज़ ने भारती दल का स्वागत करते हुए कहा कि भारत ने बहुत उन्नति की है। वहाँ की सभ्यता और संस्कृति बहुत ही सुंदर और मन मोहक है। शमऊन ने कहा कि वहाँ अलग अलग धर्मों के लोगों का एक साथ मिल कर रहना एक अनूठे अनुभव से परिचित करवाता है। इस के बाद पेरेज़ ने कहा कि एक युग ऐसा था जबकि चर्च और सरकार के बीच तनातनी थी लेकिन अब सब ही धर्मों के लोग आतंकवाद और फ़साद से परेशान हैं। कोई ख़ुदा भी क़त्ल और हत्या करने की इजाज़त नहीं देता (मैं हैरान था कि एक ऐसे देश का राष्ट्रपति जिस की आधारशिला ही निहत्थे लोगों के ख़ून से रखी गई है, किस ख़ुदा की दुहाई दे रहा है?) पेरेज़ ने आगे कहा हमारी ज़बानें अलग हैं लेकिन सब का ख़ुदा एक है (फिलिस्तीनी बच्चों को क़त्ल करते वक़्त लेकिन यह ख़ुदा याद नहीं आता) पेरेज़ ने कहा कि हम मुसलमानों को अपने दुश्मन की तरह नहीं, देखते सब ही हज़रत इब्राहीम की औलादें हैं और हम ख़ुद को किसी से ऊँचा नहीं समझते। (यह बात इसराईली अधिकारी इस लिए बार बार कह रहे है कि वह यह नहीं चाहते कि पश्चिम एशिया का विवाद मुसलमानों और यहूदियों के बीच का विवाद बन जाए। इस बात में इस्राईल का फ़ायदा है कि विश्व

भर के लोग इस विवाद को अरब-इस्राईल संघर्ष या फ़िलिस्तीन व इस्राईल के बीच की समस्या के रूप में जानें। ताकि दुनिया भर के मुसलमान इस झगड़े से अलग रहें। जहाँ तक खुद को सब से ऊँचा समझने की बात है तो यह बात सारी दुनिया जानती है कि यहूदी अपने आप को अल्लाह की पसन्दीदा क़ौम मानते हैं और बाक़ी इंसानों को छोटा, इसी लिए उनके धर्म को कोई नया व्यक्ति अपना भी नहीं सकता है। हर यहूदी के माँ या बाप में से एक का यहूदी होना ज़रूरी है।) पेरेज़ ने यह भी कहा कि मुसलमान और यहूदी दोनों ही आतंकवाद के ख़िलाफ़ हैं। (मुसलमानों के बारे में तो यह बात सच है कि उनका धर्म आतंकवाद की इजाज़त नहीं देता और उन्होंने अपनी सत्ता के दौरान यहूदियों को क़त्ल करने के बजाए उन्हें हर तरह का संरक्षण दिया लेकिन यहूदी किस मुँह से यह बात कह सकते हैं? उन्होंने तो दुनिया को आतंकवाद से परिचित करवाया है और आज तक फ़िलिस्तीन के मज़लूम मुसलमानों पर अत्याचार कर रहे हैं)
इस्राईल के राष्ट्रपति ने भारतीय दल की हिम्मत की सराहना करते हुए कहा कि हम आप की हिम्मत की दाद देते हैं और आप की आलोचना करने वालों की निंदा करते हैं। हम आप को यक़ीन दिलवाते हैं कि आप के यहाँ आने का बहुत महत्व है। (पेरेज़ एक ऐसे दल का महत्व जता रहा था जिस में कोई भी ऐसा मुसलमान नेता नहीं था जिसकी भारत में कोई अहमियत हो)
पेरेज़ ने कहा कि इस देश में मुसलमान एक अल्पसंख्यक समुदाय का दर्जा रखते हैं और उनको बराबरी के अधिकार प्राप्त हैं (इस दावे के झूठ होने की बारे में इस पुस्तक में कितने ही उदाहरण दिए गए हैं)। शमऊन ने कहा कि इस्राईल अपने पड़ोसियों के साथ अमन चाहता है और बराबरी के दर्जे की इच्छा रखता है। उसने आख़िर में कहा कि भारतीय दल अमन व शांति का संदेश

लाया है।
अपने जवाबी भाषण में दल के नेता उमैर इल्यासी ने कहा कि हम बहुत सी आलोचनाओं का निशाना बनते हुए आए हैं। हम अबू-ग़ोश इत्यादि गए और वहाँ देखा कि आपस में बहुत भाई चारा है। (अबू-ग़ोश के मुसलमानों की असली तस्वीर इस किताब में पेश की जा चुकी है।) इल्यासी ने कहा कि मुस्लिम शरीयत कोर्ट देख कर हम को बहुत अच्छा लगा। कल हम रमल्ला गए थे जहाँ फ़िलिस्तीन के विदेश उपमंत्री से मिल कर बहुत अच्छा लगा। हम मस्जिद-ए-अक़्सा भी गए और यहूदियों के इलाक़े भी हमने देखे। हम को देख कर यह ख़ुशी हुई कि दोनों आपस में मिल कर रहते हैं। इल्यासी ने आख़िर में कहा कि इस्लाम इस बात की इजाज़त नहीं देता कि किसी निर्दोष को क़त्ल किया जाए। मुसलमानों और यहूदियों को चाहिए कि आपस में मिल बैठ कर बात करें। अब वक़्त आ गया है कि यह विवाद हल हो। (भारत में कुछ मुस्लिम संगठनों की ओर से चल रहे प्रदर्शनों का इस दल को बहुत फ़ायदा हुआ क्योंकि इस्त्राईल की सरकार की नज़र में इस दल का महत्व काफ़ी बढ़ गया था)
मीटिंग के बाद भारतीय दल ने शमऊन पेरेज़ को एक क़ीमती शाल पहनाई तो मुझे लगा कि किसी फिलिस्तीनी कि लाश पर पड़ा कफ़न उठा कर शमऊन के कन्धे पर डाल दिया गया हो। शाल कंधे पर डालने के बाद दल के लोगों ने दुनिया के एक बड़े अत्याचारी और दमनकारी नेता शमऊन को शांति, सत्य, अहिंसा और प्रेम की ज्योति जलाने वाले महात्मा गाँधी की एक मूर्ति भेंट की । शायद मृत्यु के पश्चात गाँधी जी की आत्मा को घायल करने का यह अच्छा तरीक़ा था। जब गाँधी जी की मूर्ति शमऊन को पेश की गई तो यह दृश्य देख कर मुझे ऐसा लगा कि जैसे किसी हत्यारे को ज़ैतून की वह डाली पेश की जा रही है जो सारी

दुनिया में अमन का प्रतीक चिह्न है। संयोग से महात्मा गाँधी की मूर्ति का शो केस और स्टैंड हवाई यात्रा के दौरान ही टूट गया था, इसलिए वह किसी भी जगह सजाए जाने लायक़ नहीं रही। मूर्ति के टूटने से शायद गाँधी जी की आत्मा को शांति मिली हो और वह अपने आप से कह रही हो कि चलो अच्छा हुआ बापू तुम क़ातिलों के ड्राइंग रूम में सजने से बच गए।

तोहफ़े भेंट किए जाने के बाद पत्रकारों को शमऊन से बात करने का मौक़ा मिल गया तो मैंने पूछा कि फिलिस्तीनियों को उनके अधिकार देने के लिए इस्राईल की सरकार क्या कर रही है? इस सवाल पर पेरेज़ ने कहा कि मुझको लगता है कि अमन क़ायम करने एक लिए अबू माज़न (महमूद अब्बास) एक बेहतर और उचित आदमी हैं। हमारे प्रधान मंत्री यहूद ओलमर्ट उनसे लगातार बात कर रहे हैं। हम इस सिलसिले में काफ़ी आगे बढ़े हैं पहले हम ने जार्डन और मिश्र से शांति समझौता किया। अब फिलिस्तीनियों से Pact करने वाले हैं। (इसराईली सरकार की फिलिस्तीनियों के साथ शांति प्रयासों की सच्चाई तो आप पिछले पन्नों पर पढ़ ही चुके हैं।)

पी टी आई के संवाददाता ने जब उनसे यह पूछा कि इस्राईल और फ़िलिस्तीन के बीच कब तक अमन स्थापित हो जाएगा? तब पेरेज़ ने कहा कि हम को लगता है यह घड़ी अब नज़दीक आ रही है और अब समझौते का वक़्त आ गया है लेकिन शांति समझौते से पहले एक ऐसी दस्तावेज़ तैयार होना है जिस में कुछ बुनियादी उसूल तय किए जाएँगे ताकि दोनों पक्षों के बीच भरोसा क़ायम हो सके। (कोई कुछ भी कहे लेकिन यह बात सच है कि हिज़्ब उल्लाह से मात खाने और हमास की दिन प्रति दिन बढ़ती लोकप्रियता से इस्राईल के अधिकारियों का लहजा बदला हैं और वह अब पुराने तेवर के साथ बात नहीं करते हैं।)

भारत और इस्राईल के संबंधों के बारे में एक अन्य पत्रकार द्वारा पूछे गए एक सवाल के जवाब में पेरेज़ ने कहा कि भारत ने बहुत सी परेशानियों के बावजूद अपने लोकतंत्र को बचा कर रखा है और भारत के साथ इस्राईल के रिश्ते बहुत अच्छे हैं। शमऊन ने यह जुमला सिर्फ़ हवा में नहीं कहा था बल्कि इस बात का गवाह था कि भारत और इस्राईल का संबंध अंदर ही अंदर बहुत बढ़ गया है भाजपा की सरकार के ज़माने में भारत ने इस्राईल से हथियार ख़रीदने का जो सिलसिला शुरू किया था वह बढ़ता ही जा रहा हय। पिछले आठ वर्षों में इस्राईल से भारत ने अरबों डॉलर के हथियार ख़रीदे हैं (और अधिकारियों ने इन रक्षा सौदों में करोड़ों रुपये का कमीशन भी खाया है।) आप को यह जान कर हैरानी होगी कि भारत इस वक़्त ईस्राइली शस्त्रों का सब से बड़ा ख़रीदार है। आज कल हमारा देश इस्राईल से बिना पायलट वाले यान Unmanned Aerial Vehicles और बहुत ही अचूक निशाना लगाने वाली हथियार Precision Guided Munitions ख़रीद रहा है। यहाँ पर यह बात लिखना उचित होगी कि 2006 में भारत ने इस्राईल से डेढ़ बिलियन डॉलर के हथियार ख़रीदे थे। और जल्द ही रक्षा सौदों की यह राशि 30 बिलियन डॉलर तक पहुँच जाएगी। रक्षा सौदों का यह सिलसिला शुरू तो भाजपा के दौर में हुआ था लेकिन कॉंग्रेस सरकार के दौर में यह सौदे काफ़ी फूले फले।

शमऊन पेरेज़ से मुलाक़ात ख़त्म होने के बाद मेरी नज़र वहाँ बिछे ईरानी क़ालीन पर पड़ी, जिस पर बाफ़्त-ए-किरमानशाह लिखा था इस फ़ारसी अलेख का अर्थ यह था कि यह क़ालीन ईरान के किरमानशाह नगर में बुना गया है। मैंने एरन लरमैन (जो ईरान से बहुत घृणा करता है) को छेड़ते हुए कहा कि यह क़ालीन तो ईरानी है? इस पर एरान ने बहुत बुरा सा मुँह बना

कर कहा कि किसी ज़माने में हमारे भी ईरान से बहुत अच्छे संबंध थे, यह क़ालीन ईरान के शाह ने भेंट किया था। हम ईरान के शाह को अपना भाई मानते थे (हर इस्लाम फ़रोश ईस्राइली क़ौम का भाई होता है) फिर वह बहुत रहस्यमय ढंग से बोला कि आप यक़ीन रखिए, ईरान से एक दिन फिर से हमारे अच्छे संबंध स्थापित होंगे। इस जुमले पर ज़ीशान हैदर ने पूछा कि वह कैसे क्या ईरान और इस्राईल के बीच कभी कूटनीतिक संबंध स्थापित हो सकते हैं? लरमैन ने एक ज़हरीली मुस्कराहट के साथ कहा ''हाँ ! बहुत जल्द वहाँ की इस्लामी हुकूमत सत्ता से बाहर होने वाली है उस के बाद फिर वह हमारा दोस्त हो जाएगा (बिल्ली को ख़्वाब में छीछड़े नज़र आते हैं, यह कहावत ही पूरी होती लग रही थी) ज़ीशान ने फिर पूछा कि आप को कब तक उम्मीद है कि ईरान की इस्लामी हुकूमत सत्ता से बाहर हो जाएगी तो एरान ने बड़े घमंड के साथ कहा 2009 तक। इस पर ज़ीशान ने कहा कि वह कैसे? लरमैन ने एक अमरीकी कुत्ते की तरह भौंकते हुए कहा कि आप को मालूम है कि जार्ज बुश 2009 तक अमरीका का राष्ट्रपति रहेगा और बुश की एक आदत है कि वह कोई काम अधूरा नहीं छोड़ता है। ईरान की इस्लामी हुकूमत को ख़त्म करना बुश के एजेन्डे में है और वह उसको ज़रूर पूरा करेगा।

एरान लरमैन की बातों से साफ़ ज़ाहिर था कि बुश ने ईस्राइली अधिकारियों को इस बात का आश्वासन दे रखा है कि वह अफ़ग़ानिस्तान और इराक के बाद ईरान पर हमला ज़रूर करेगा। एरान लरमैन की बातों में वह नफ़रत साफ़ तौर पर झलक रही थी जो ईस्राइली नागरिकों के दिलों में आज ईस्लामी देश ईरान के लिए मौजूद है। हर ईस्राइली की नज़र में इस्राईल का सब से बड़ा दुश्मन ईरान है।

शमऊन पेरेज़ के घर से निकलने के बाद भारतीय डेलिगेशन के

लोग होटल की तरफ़ चले गए।
ज़ीशान हैदर के साथ मैं पश्चिमी यरोशलम की Walking Street में घूमने के लिए निकल पड़ा। यहाँ मुझे यहूदियों की रंग-भेद मानसिकता का शिकार होने का मौक़ा भी मिला। मैंने सिगरेट बेचने वाली एक यहूदी औरत की दुकान से सिगरेट ख़रीदना चाहा तो उस ने मुझे निहायत बदतमीज़ी से झिड़क दिया। मैं यह समझा कि वह औरत अँग्रेज़ी नहीं समझ पा रही है इसलिए मैंने एक राहगीर को रोक कर कहा कि इस औरत को बता दीजिए कि मैं सिगरेट का पैकेट ख़रीदना चाहता हूँ। उस आदमी ने उस औरत से हिबरू भाषा में कुछ कहा फिर मेरी तरफ़ पलट कर कहा कि यह औरत आप के हाथ सिगरेट नहीं बेचना चाहती। मैं सूरत से मुसलमान लग रहा था शायद इसी लिए उस यहूदी औरत ने मुझ से झिड़क कर बात की।
काफ़ी देर हम दोनों बाज़ारों में घूमते रहे। जगह जगह भिखारी भी नज़र आए, नाच-गा कर तथा कर्तब दिखा कर पैसे कमाने वाले लोग भी इस स्ट्रीट पर काफ़ी बड़ी तादाद में मौजूद थे। इन लोगों को देख कर मैंने सोचा क्या यही इनके ख़्वाबों की जन्नत है जिसका इनकी किताब तौरैत में वायदा किया गया था? Walking Street पर टहलते टहलते हम लोगों ने कुछ सामान भी ख़रीद लिया। इस तरह काफ़ी वक़्त गुज़र गया और हम इसी स्ट्रीट के निकट स्थित बैत-ए-मूसा में पहुँच गए जहाँ शाम के भोज पर सब लोग आमंत्रित थे। बैत-ए-मूसा में अमरीकी यहूदियों के उस संगठन का कार्यालय है जिसने भारतीय डेलिगेशन को इस्राईल में बुलाया था। डिनर में अभी देर थी तो हम लोग इंटर नेट पर बैठ गए और वहीं से रोज़नामा राष्ट्रीय सहारा के लिए रिपोर्ट भेजी। इस काम में काफ़ी समय निकल गया और इसी बीच भारतीय डेलिगेशन के लोग भी बैत-ए-मूसा में पहुँच गए।

अमरीकी यहूदियों के इस संगठन के कई कार्यकर्ता और अधिकारी भी वहाँ मौजूद थे। एरान लरमैन यहाँ पर विशेष अतिथि के रूप में बैठा हुआ था। डिनर शुरू होने से पहले भारतीय डेलिगेशन के सदस्यों से कहा गया कि इस दौरे के बारे में अपने विचार सामने रखें। ज़्यादातर लोगों ने यही कहा कि दौरा बहुत कामयाब रहा बल्कि कुछ सदस्य तो इतने जोश में थे कि बस यही कहते कहते रह गए कि अब फ़िलिस्तीन और इस्राईल के बीच कोई विवाद नहीं रहेगा और हमारे आने के बाद यह मामला हल हो जाएगा। सब ईस्राइली लोगों की मेहमान-नवाज़ी और उनके शांति के लिए वचनबद्ध होने के गुणगान कर रहे थे। पता नहीं कैसे मौलाना अफ़ज़ल निज़ामी ने यह कहने की हिम्मत कर दी कि जो हिटलर ने यहूदियों के साथ किया वही आज यहूदी मुसलमानों के साथ कर रहे हैं। इस के अलावा मौलाना हिफ़्ज़-उर-रहमान मेरठी ने भी माजिद देवबन्दी का एक शेर पढ़ दिया

ख़ौफ़ क्या हो हमें यज़ीदों का
हम हुसैनी मिज़ाज रखते हैं

असल में इस्लाम धर्म में यज़ीद ज़ुल्म का प्रतीक है और इमाम हुसैन सहनशीलता के प्रतीक हैं और अत्याचारी के सामने सिर उठा कर अपने आदर्शों पर चलने वालों के लिए प्रेरणास्रोत हैं। हिज़्ब उल्लाह ने इस्राईल के विरुद्ध अपनी जंग में इमाम हुसैन को ही प्रेरणास्रोत माना था। ईस्राइली भी यह बात जानते हैं कि हुसैनी मिज़ाज रखने वाले कौन लोग हैं लेकिन चूँकि शेर का अँग्रेज़ी में अनुवाद नहीं किया गया इस लिए यह शेर सिर्फ़ हम ही लोग समझे।

जब मेरी बारी आई तो मैंने कहा कि इस्राईल की सरकार शांति वार्ता को लेकर सीरियस नहीं है इस पर प्रिया टंडन हत्थे से उखड़ गई और बोलीं, ''ऐसा नहीं है। सब लोग शांति के प्रति

संजीदा हैं सब लोग अमन चाहते हैं। वैसे भी प्रिया को मेरी तरफ़ से किए जाने वाले सवाल काफ़ी परेशान कर रहे थे और वह मेरी वजह से काफ़ी Uncomfortable थीं लेकिन मैं अपनी बात पर अड़ा रहा। असल में प्रिया टंडन अमरीकी यहूदियों के संगठन के लिए काम करती हैं तो उन्हें तो यह साबित करना ही था कि यह टूर पूरी तरह सफल रहा।

अंतिम दिन का कार्यक्रम

यात्रा के अंतिम चरण में भारतीय दल को तीन संस्थानों की सैर करवाई जाना थी। पहला स्थान था एक ऐसा केंद्र जहाँ अन्य देशों से इस्राईल में बसने के लिए आने वालों को बसाया जाता है। इस्राईल की सरकार द्वारा स्थापित किए गए इस केंद्र को Immigration and Absorption केंद्र कहा जाता है। इस केंद्र में उस समय 6000 यहूदी युवक व युवतियाँ मौजूद थी। इस केंद्र में इन लोगों को इस्राईल की सभ्यता, संस्कृति और हिबरू भाषा सिखाई जाती है। भारतीय दल के उर्दू जानने वाले लोगों को इस केंद्र का परिचय देते हुए प्रिया टंडन ने कहा कि यहाँ उन लोगों को आश्रय दिया जाता है जो इस्राईल में बसने की ख़्वाहिश रखते हैं। उन्होंने यह भी कहा कि यहाँ बसने वालों को शिक्षा के साथ आर्थिक सहायता भी दी जाती है। इस पर मैंने प्रिया को टोकते हुए कहा कि यहाँ हर किसी को नहीं सिर्फ़ यहूदी लोगों को आश्रय दिया जाता है तो प्रिया मुझे झूठा बनाने की कोशिश करने लगीं। जबकि मुझे इस तरह के केंद्रों के बारे में पहले से मालूम था कि इस्राईल की सरकार देश के विभिन्न क्षेत्रों में आश्रय केंद्र चलाती है ताकि विभिन्न देशों से यहूदियों को इस्राईल की ओर पलायन करने के लिए प्रोत्साहित किया जा सके। प्रिया टंडन नाराज़ हो कर बोलीं कि नहीं ऐसा नहीं हैं यहाँ हर वह व्यक्ति जो इस्राईल में रहना चाहता है आकर शरण ले सकता है और जब तक उस को काम काज नहीं मिल जाता वह यहाँ से आर्थिक सहायता भी प्राप्त कर सकता है। या तो प्रिया टंडन को इस बारे में मालूम नहीं था या वह दल के लोगों को गुमराह करने में लगी थीं लेकिन मैंने भी सोच लिया था कि प्रिया के इस झूठ को मैं हद तक पहुँचा कर ही दम लूँगा। इस लिए जैसे उस इमिग्रेशन केंद्र के टीचर्स ने दल के

लोगों से बातचीत शुरू की तो मैंने सब से पहले यही पूछा कि क्या यहाँ कोई मुसलमान या ईसाई आ कर शरण ले सकता है? तो केंद्र के संचालक ने दो टूक अन्दाज़ में जवाब दिया कि नहीं,,, यह केंद्र हम ने सिर्फ़ यहूदी लोगों के लिए खोला है यहाँ किसी दूसरे धर्म वाले के लिए कोई स्थान नहीं है। मुझे मालूम था कि इस्राईल ने इस तरह के केंद्र इस साज़िश के तहत बनाए हैं कि दुनिया भर से यहूदी लोग यहाँ पलायन करके आएँ और एक दिन यहूदी मुसलमानों से संख्या में ज़्यादा हो जाएँ।
एक स्थानीय यहूदी ने मुझे बातों बातों में यह भी बताया कि यहाँ आने वाले अधिकतर युवक अमरीका जाने का उद्देश्य ले कर ही आते हैं। पहले यह लोग यहाँ एड़मीशन लेते हैं, हिबरू सीखते हैं इस्राईल का पासपोर्ट बनवाते हैं और अमरीका में काम ढूँढ़ने निकल जाते हैं। उस ने कहा कि यह अमरीका जाने का शॉर्ट कट तरीक़ा है। मुझे इस केंद्र में तो दिलचस्पी नहीं थी। मैं तो इस्राईल के उस सीमावर्ती क़स्बे जाने की जल्दी थी जिस की सीमा ग़ज़्ज़ा से मिलती थी।

इस केंद्र में कुछ देर ठहरने एक बाद हम लोग ग़ज़्ज़ा के सीमावती गाँव सिदरोत के लिए निकल पड़े। इस केंद्र से एक से 125 किलो मीटर दूर यह क़स्बा इस्राईल का बहुत ही चर्चित क्षेत्र हैं। डेढ़ घंटे की यात्रा के बाद हम लोग सिदरोत पहुँच गए। यह मैदानी क्षेत्र है और यहाँ भारत, ईथोपिया और अमरीका से पलायन करने वाले यहूदी बसाए गए हैं। यह क्षेत्र C Zone कहा जाता है। यहाँ पर यह बताना आवश्यक है कि इस्राईल के सभी नगर और क़स्बे तीन वर्गों में बटे हुए हैं। इन को A, B और C एरिया कहा जाता है। मुस्लिम बाहुल्य क्षेत्र को A Zone, मिली-जुली आबादी वाले क्षेत्र को B Zone और यहूदियों की बस्तियों को C Zone कहा जाता है। जहाँ जहाँ ए ज़ोन मिलेगा

वहाँ नागरिक सुविधाओं की कमी साफ़ तौर पर नज़र आएगी और जिस जगह यहूदी लोगों की बस्ती आबाद होगी वहाँ आप को रहन सहन और भोगविलास की हर चीज़ उपलब्ध होगी।
सिदरोत से सिर्फ़ 800 मीटर के फ़ासले पर ग़ज़्ज़ा नगर स्थित है आप किसी भी टीले पर खड़े हो कर सीमा पार चल रहे वाहनों को देख सकते हैं। ग़ज़्ज़ा पट्टी कहा जाने वाला यह क्षेत्र इसराईली सेना ने 1967 के युद्ध में छीना था। उस के बाद इस्राईल ने इस शहर को अपनी कॉलोनी बना लिया था। 70 की दहाई में ग़ज़्ज़ा में मकान बनना शुरू हुए और इस्राईल की सरकार ने हज़ारों यहूदियों को विदेशों से ला कर यहाँ बसा दिया। सन 2000 तक इस क्षेत्र में इस्राईल ने अपनी मनमानी की और मुसलमानों को हर तरह से परेशान किया लेकिन फिलिस्तीनी जनता की तरफ़ से दूसरा इन्तेफ़ाज़ा आंदोलन शुरू होते ही ईस्राइली सरकार को यह बात समझ में आ गई कि फिलिस्तीनी जनता को अब और अधिक ताक़त से नहीं दबाया जा सकता। इन्तेफ़ाज़ा का अर्थ होता है उठ खड़े होना। फ़िलिस्तीन के छोटे छोटे बच्चों, महिलाओं और बुज़ुर्गों ने नवयुवकों के साथ इस तरह कंधे से कंधा मिला कर उठ खड़े हुए कि बिना हथियारों के ही उन्होंने इस्राईल की शक्तिशाली सेना को अपने लहू के दरिया में डुबु दिया। मुसलमानों का यह जोश देख कर इस्राईल ने समझ लिया कि अब ग़ज़्ज़ा पट्टी को छोड़ देना ही उचित है।
आख़िर को 2005 में इस्राईल ने ग़ज़्ज़ा पट्टी को ख़ाली कर दिया। Gaza Strip कहलाने वाला यह क्षेत्र Mediterranean Sea के किनारे किनारे फैला हुआ है। इस की सीमाएँ उत्तर पूर्व में मिश्र से और दक्षिण पश्चिम में इस्राईल से मिलती हैं। ग़ज़्ज़ा की इस्राईल से मिलने वाली सीमा 41 किलोमीटर लंबी है। ग़ज़्ज़ा पट्टी का कुल क्षेत्र फल 360 वर्ग किलोमीटर है और यहाँ की

कुल आबादी 15 लाख है। ग़ज़्ज़ा की हवाई और तटीय सीमाओं पर अभी भी इस्राईल का ही क़ब्ज़ा है इसी कारण वह जब चाहता है, इस क्षेत्र में आवश्यक वस्तुओं की सप्लाई रोक देता है।
हम लोगों को सिदरोत नाम के जिस क्षेत्र में लाया गया था वह हमास के कब्जे वाले फिलिस्तीनी क़स्बे बैत-ए-हनून से बिल्कुल मिला हुआ था। (हम लोगों को पहले ही बता दिया गया था कि ग़ज़्ज़ा में प्रवेश मुम्किन नहीं है क्योंकि वहाँ के हालात रमल्ला जैसे नहीं हैं।)
सन 2000 तक सिदरोत में बसाए गए यहूदी बहुत चैन की ज़िंदगी गुज़ार रहे थे लेकिन दूसरे इन्तेफ़ाज़ा आंदोलन के शुरू होते ही फिलिस्तीनी जनता के घरों में मौत का तांडव करने वाले यहूदी भी भय और मौत के साये में जीने पर मजबूर हो गए क्योंकि इस इलाक़े में अभी तक शांति स्थापित नहीं हुई है। सिदरोत में अभी भी हमास के ठिकानों से दाग़े जाने वाले मिज़ाइल हर रोज़ गिरते हैं। स्थानीय लोगों का कहना है कि पिछले पाँच वर्षों में हमास की तरफ़ से सिदरोत पर 5000 मिज़ाइल फेंके जा चुके हैं। इस का अर्थ यह हुआ कि हर वर्ष यहाँ 1000 मिज़ाइल गिरते हैं यानी हर दिन तीन या चार मिज़ाइल सिदरोत पर गिरते हैं। धरती से धरती पर मार करने वाले इस मिज़ाइल का नाम क़ुसाम है। यहाँ रहने वाले ईस्राइली इस की शिकायत तो करते हैं कि ग़ज़्ज़ा की तरफ़ से मिज़ाइल आते हैं लेकिन यह नहीं बताते कि फिलिस्तीनी फ़ौजी यह मिज़ाइल बिना किसी कारण के फेंकते हैं या कोई कारण भी है सिदरोत को निशाना बनाने का,,,,? ख़ैर मिज़ाइलों की चर्चा बाद में, अभी तो सिदरोत के एक बहुत ही प्रभावशाली व्यक्तित्व का आप से परिचय करवाना है। एक अत्याचारी देश में ऐसे भी सच बोलने वाले लोग हैं यह जान कर मुझे बहुत ख़ुशी हुई। यह आदर्शवादी व्यक्ति भी यहूदी धर्म के

अनुयायी हैं लेकिन जिस तरह हर धर्म में सत्य का दामन थामने वाले कुछ गिने चुने लोग ही होते हैं उसी तरह यहूदी वर्ग में प्रोफ़ेसर ज़ोहर अवितान Zohar Avitan भी एक सच्चे पुरुष हैं जो सिदरोत के Sapir College प्रोफ़ेसर के पद पर कार्यरत हैं। यह मेरी खुशक़िस्मती थी कि प्रोफ़ेसर ज़ोहर से मेरी मुलाक़ात हुई। उन्होंने थोड़ी देर की बातचीत में हम लोगों के सामने सारी सच्चाई बयान कर डाली। प्रोफ़ेसर ज़ोहर ने फिलिस्तीनियों पर तोड़े जाने वाले अत्याचारों की ज़िम्मेदारी अमरीका और इस्राईल की नीतियों पर डाली। उन्होंने कहा कि अमन के मामले में इस्राईल की सरकार serious नहीं हैं, वह तो शांति का नाम अपने हितों की पूरा करने के उद्देश्य से कर रही है। ईस्राइली सरकार को विवाद हल करने में दिलचस्पी नहीं है। उन्होंने कहा कि हमारे क्षेत्र की पूरी आबादी ज़मीन के नीचे बने बंकरों में आश्रय लेने पर मजबूर है। हमारे बच्चों का जीवन इतना कठिन हो चुका है कि वह घर से बाहर खेलने नहीं जा सकते, वह स्कूल जाते हैं तो यह चिंता लगी रहती है कि पता नहीं वह घर लौट कर आएँगे कि नहीं। प्रोफ़ेसर ज़ोहर ने सच बोलते हुए कहा कि यही हाल सीमा के उस पार बसने वाले फिलिस्तीनी लोगों का भी है। प्रोफ़ेसर ज़ोहर ने बहुत हिम्मत से काम लेते हुए कहा कि हम मिज़ाइलों का नहीं अपने लीडरों की नीतियों का निशाना बन रहे हैं। हमारे राजनेता हमास और अल-फ़तह को आपस में लड़वा कर शांति का सपना देख रहे हैं जो एक बहुत बड़ी बेवक़ूफ़ी है। प्रोफ़ेसर ज़ोहर ने हम लोगों को लंच करवाया और स्लाइड शो की मदद से फ़िलिस्तीन और इस्राईल के बीच चल रहे 6 दशक पुराने विवाद पर प्रकाश डाला। उन्होंने हम तीनों पत्रकारों को अपने ही कॉलेज के एक कार्यालय में इंटरनेट उपलब्ध करवाया ताकि हम लोग अपने अपने Dispatch भेज सकें। इस बीच भारतीय दल के

लोगों का वहाँ क्या कार्यक्रम रहा हम को पता नहीं चल सका। जब हम तीनों पत्रकार एक घंटे के बाद ख़बरें भेज कर कार्यालय से बाहर निकले तो प्रोफ़ेसर ज़ोहर ने कहा कि चलिए आप लोगों को सिदरोत की सैर कराएँ। हम लोग भारतीय दल के साथ बस में सवार हो कर सैर के लिए चल पड़े। सिदरोत का यह शहर दो भागों में बटा हुआ है एक हिस्सा धरती की ऊपर है और दूसरा भाग धरती के नीचे बने आश्रय स्थलों पर आधारित है। हर मोहल्ले में विशेष बंकर बने हुए है। मिज़ाइल के हमले का साइरन बजते ही आस पास रहने वाले यहूदी इनमें आश्रय लेने के लिए घुस जाते हैं । रोज़ाना दिन में दो या तीन बार इस तरह के हमले होते हैं और लोग अपने घरों से निकल कर जान बचाने के लिए इन्हीं आश्रय स्थलों में पनाह लेते हैं। इतने बड़े पैमाने पर किए गए प्रबंधों के बाद भी कई बार हमास की तरफ़ से से दाग़े जाने वाले मिज़ाइलों से कई यहूदी मारे जाते हैं या घायल हो जाते है। सीमा के उस पार का जीवन भी ख़तरों से भरा है वहाँ भी मौत का तांडव हर रोज़ होता रहता है लेकिन उधर के लोगों को इन हमलों से बचाने के लिए कंकरीट के शेल्टर नहीं हैं। उधर बसने वाले मुसलमान अल्लाह की रहमत (कृपा) के सहारे खुले आसमान के नीचे शहादत की छाँव में अपने दिन रात गुज़ारते हैं और मौत की आँखों में आँखें डाल कर ज़िंदा रहते हैं।

सिदरोत शहर के विभिन्न बाज़ारों से होते हुए हम लोग एक बस्ती में पहुंचे फिर प्रोफ़ेसर ज़ोहर हम सब को अपने साथ एक ऊँचे से टीले पर ले गए। इस टीले से ग़ज़्ज़ा का बैत-ए-हनून क़स्बा बिल्कुल साफ़ दिखाई दे रहा था। प्रोफ़ेसर ज़ोहर ने इशारे से बताया कि इसी जगह से सिदरोत पर मिज़ाइल दाग़े जाते हैं। ग़ज़्ज़ा से हम लोगों सिर्फ़ 800 मीटर की दूरी पर थे। हम लोग ग़ज़्ज़ा के लोगों के देख सकते थे और वहाँ के लोग हम लोगों को

देख सकते थे। मेरी लिए यह दृश्य बड़ा अजीब सा था सीमा के उस पार मेरे वह मुसलमान भाई थे जो पिछले 60 वर्षों से इस्त्राईल के अत्याचारों और दमनकारी नीतियों का मुक़ाबला सिर्फ़ अल्लाह की मदद के सहारे कर रहे हैं और सीमा के इस पार मुसलमानों का वह डेलिगेशन खड़ा था जो अपने मुसलमान भाइयों के ख़ून की नदिया बहाने वाले इसराईलियों से हाथ मिला रहा था।

अभी मैं इन्हीं ख़्यालों में खोया था कि एक ज़ोर का धमाका हुआ और प्रोफ़ेसर ज़ोहर ज़ोर से चिल्लाए, ''भागो,,,भागो,,,क़ुसाम,,, भागो,,, क़ुसाम,,, इतना सुनना था कि भारतीय दल के लोग टीले पर से गिरते पड़ते हुए भागे। कोई झाड़ियों में उलझता हुआ भागा, कोई टीले पर से फिसलते हुए नीचे पहुँचा। भारतीय दल के सदस्यों के चेहरे देखने वाले थे। हर एक के मुँह पर हवाइयाँ उड़ रही थीं। इसी के साथ पूरे शहर में साइरन बजने लगे और यहूदी लोग अपने अपने घरों से निकल कर शेल्टर में छुपने लगे। हम लोग भी टीले की आड़ में दुबके बैठे रहे। तोड़ी देर बाद साइरन शांत हो गए और हम लोग टीले की ओट से निकल कर बस में सवार हो गए।

बस में बैठने के बाद जैसे ही बस चलने के लिए तैयार हुई तो मैंने दल के लोगों को छेड़ते हुए कहा कि अगर इस हमले में हम सब मर जाते तो भारत के मुसलमान तो बहुत ख़ुश होते कि चलो अच्छा हुआ कि यहूदी लोगों से हाथ मिलाने गए थे तो अल्लाह ने मौत भी यहूदियों की जैसी ही दी। मेरा यह मज़ाक़ किसी को रास नहीं आया और सब ने बहुत ही बुरा मुँह बना कर मेरी तरफ़ देखा। मिज़ाइल के इस हमले के बाद हमारे गाइड सोलोमन ने इस तरह का आभास देने की कोशिश की कि जैसे यह क़ुसाम मिज़ाइल भारतीय दल को मारने के लिए ही फेंका था। भारतीय

दल के लोग भी यही समझ रहे थे कि क़ुसाम मिज़ाइल का निशाना वही थे, उन्हें लग रहा था कि हमास के लोगों ने भारतीय दल को टीले पर खड़ा देख लिया और चूँकि हम लोग ग़ज़्ज़ा की तरफ़ इशारे कर रहे थे इस लिए हमास ने मिज़ाइल दाग़ दिया। बाद में पता चला कि यह मिज़ाइल उस टीले से तीन किलो मीटर दूर था जहाँ हम लोग खड़े थे। इस हमले में किसी ईस्राइली नागरिक के मरने या घायल होने की हम लोगों के पास कोई सूचना नहीं थी।

थोड़ी देर बाद यरोशलम की तरफ़ वापसी का सफ़र शुरू हुआ। रास्ते भर सब यही बातें कर रहे थे कि क़ुसाम मिज़ाइल का निशाना भारतीय दल ही था लेकिन मुझ को इस बात पर विश्वास नहीं हो रहा था क्योंकि मेरे विचार में हमास का निशाना इतना कच्चा नहीं था कि क़ुसाम मिज़ाइल निशाना बनने वाली जगह से तीन किलो मीटर दूर पर गिरता। अगर हमास को दल पर हमला करना ही था तो वह AK-47 से आसानी से निशाना बना सकती थी क्योंकि दल जिस जगह पर खड़ा था वह इस राइफ़ल की रेंज में थी। चूँकि भारतीय दल के साथ कोई ईस्राइली सैनिक नहीं था और सभी लोग आम नागरिकों के लिबास में थे इसी लिए हमास ने हमला नहीं किया।

यरोशलम के रास्ते में हद्सा नाम की एक बहुत ही सुंदर घाटी दिखाई और बताया कि यहाँ पर जो ख़ूबसूरत भवन दिखाई दे रहा है वह दुनिया के बेहतरीन अस्पतालों में से एक है। उस ने बताया कि इस अस्पताल में कई अरब राष्ट्राध्यक्ष भी इलाज के लिए आ चुके हैं। पता नहीं वह ऐसे ही झूठ बोल रहा था या सचमुच कुछ अरब देशों के शासक चोरी छिपे यहाँ आए भी हों।

होलोकास्ट म्यूज़ियम

यरोशलम पहुँचने के बाद हमारे गाइड सोलोमन ने डेलिगेशन के सदस्यों को होटल भेज दिया लेकिन हम तीनों पत्रकारों को वह होलोकास्ट म्यूज़ियम दिखाने की बहुत ज़िद कर रहा था।। मैं इस म्यूज़ियम को देखना नहीं चाहता था क्योंकि मुझे मालूम था कि इस संग्रहालय को यहूदी अपने ऊपर हुए अत्याचारों को दिखा कर आज भी मज़लूम बने रहना चाहते हैं जबकि वह हिटलर से ज़्यादा बड़े मुजरिम हैं। मेरे मना करने पर यू एन आई के पत्रकार शेख़ मंज़ूर साहब ने कहा कि यह लोग इस म्यूज़ियम को लेकर बहुत भावुक हैं चलिए देख लेते हैं लेकिन क़िस्मत से म्यूज़ियम बंद हो चुका था। हमारा गाइड अपनी तरफ़ से पूरी कोशिश कर रहा था, कि हम लोग याद विशाम नाम का यह म्यूज़ियम ज़रूर देख लें शायद इस्राईल की अधिकारियों कि तरफ़ से उस पर बहुत दबाव था इसी कारण से वह हम को ग़ज़्ज़ा से सीधे म्यूज़ियम परिसर में लाया था। हमारे गाइड की बहुत कोशिश के बावजूद हम लोग म्यूज़ियम में प्रवेश पाने में सफल नहीं हुए। फिर भी हम को हमारा गाइड म्यूज़ियम के उस हिस्से में ले जाने में कामयाब हो ही गया जो तथाकथित होलोकास्ट में मारे गए बच्चों की याद में स्थापित किया गया था। संग्रहालय के इस भाग में बिल्कुल अँधेरा था। म्यूज़ियम के बीच में 6 मोमबत्तियाँ जल रही थीं और दीवारों पर शीशे लगे थे जिनमें इन मोमबत्तियों का प्रतिबिंब हज़ारों मोमबत्तियों की शक्ल में दिखाई दे रहा था। इस प्रकार का दृश्य हम लोगों के लिए बिल्कुल नया नहीं था। इसी प्रकार का दृश्य फ़िल्म निर्माता के आसिफ़ ने अपनी फ़िल्म मुग़ल-ए-आज़म में भी इसी प्रकार की कला का प्रदर्शन किया था।। संग्रहालय का यह भाग देख कर जब हम बाहर निकले तो हमारे गाइड ने पूछा कि

आप को कैसा लगा यह म्यूज़ियम? मैंने कहा कि यह संग्रहालय देख कर मुझे वह बच्चे याद आए जो जिनको इस्त्राईल के सैनिकों ने ग़ज़्ज़ा और हैफ़ा में शहीद किया है। मेरे जवाब पर उस यहूदी गाइड का चेहरा देखने लायक़ था। हम थोड़ा सा आगे बढ़े तो गाइड ने इशारा करके कहा कि यह हमारा क़ब्रिस्तान है जहाँ एक दो ईस्त्राइली सिपाहियों की लाशें हर रोज़ दफ़न करने के लिए लाई जाती हैं। मैंने कहा इस में क्या ख़ास बात है? फ़िलिस्तीन में तो आप लोगों की मेहरबानी से हर दिन 5-6 लाशें दफ़न की जाती हैं। इस के बाद मैंने कह ही दिया कि अगर फिलिस्तीनी सरकार ऐसा ही म्यूज़ियम बनाए तो उस की तस्वीरें जर्मनी के होलोकास्ट से ज़्यादा भयानक होंगी। मेरी बातों से सोलोमन का चेहरा उतर चुका था। वह कुछ बोलने की स्थिति में नहीं था। मेरी बातों से मेरे पत्रकार साथी बहुत खुश थे कि मैंने बहुत साफ़ और दो टूक बातें कीं।

म्यूज़ियम से लौट कर हम लोगों को एक बार फिर रब्बाई डेविड रोज़न से बात करना थी। वह और उनके साथी डेलिगेशन के लोगों से Feedback चाहते थे। डेलिगेशन के सदस्यों ने इस यात्रा को बहुत सफल बताया। एक साहब तो इतना आगे बढ़ गए कि डींग मारते हुए बोले कि हमने यहाँ से शांति फैलाने का जो काम शुरू किया है उस को सारी दुनिया में फैलाएँगे। कुछ लोगों ने कहा कि इस्त्राईल की जो तस्वीर उनके मन में थी वह बदल गई और यहाँ वैसे हालात नहीं हैं जैसे कि हम ने समझे थे। सब एक दूसरे से आगे जाने की कोशिश कर रहे थे और अपने ईस्त्राइली मेज़बानों को खुश करने के लिए इस्त्राईल की प्रशंसा में लगे थे।

मेरा नंबर आया तो मैंने कहा कि मैंने होश सँभाला तो फिलिस्तीनी जनता को अत्याचारों में घिरा हुआ ही पाया और इसी कारण अगर

किसी देश से मैंने बचपन से आज तक सबसे ज़्यादा नफ़रत की है तो वह इस्राईल ही है। यहाँ आ कर मैंने फिलिस्तीनी जनता की परेशानियों में कमी नहीं पाई बल्कि उनके साथ किए जा रहे अन्याय को बढ़ा हुआ ही पाया। मैंने कहा कि अमरीकन ज्युईश कमेटी शांति की लाख कोशिश करे जब तक कि बैत-उल-मुक़दद्स का मामला हल नहीं हो जाता यहाँ किसी तरह का अमन स्थापित नहीं हो सकता। मैंने यह भी कहा कि अमन की बात फिलिस्तीनियों के साथ होनी चाहिए,,, जिन लोगों की अपने देश में कोई पहचान नहीं है वह यहाँ क्या भूमिका निभा सकेंगे?
मेरी बात पूरी होने के बाद कुछ लोगों ने सच्चाई भी बताई और इस्राईल द्वारा किए जा रहे अत्याचारों पर दुख भी ज़ाहिर किया। पी टी आई के संवाददाता ज़ीशान हैदर ने कहा कि मार्टिन लूथर किंग ने कहा था कि अगर एक जगह अन्याय हो रहा है तो हर जगह न्याय को ख़तरा है। ज़ीशान ने कहा कि आप का होलोकास्ट म्यूज़ियम देख कर मुझे चार महीने का बच्चा इमाम हेजू याद आया जिसके मुँह पर (दूसरे इन्तेफ़ाज़ा आंदोलन के दौरान) ईस्राइली सेना का गोला लगा था। ज़ीशान ने कहा कि फ़िलिस्तीन में जितनी क़ब्रें बच्चों की हैं दुनिया के किसी मुल्क में इतनी क़ब्रें एक जगह पर नहीं होंगी। इस के बाद मैं उठकर अपने रूम में चला गया क्योंकि नमाज़ का समय निकला जा रहा था। इसलिए मुझे यह पता नहीं चल सका कि दल के अन्य सदस्यों ने क्या क्या बातें कीं। जब मैं नमाज़ पढ़कर वापस आया तो डेविड रोज़न की ओर से भारतीय दल का शुक्रिया अदा किया जा रहा था और अमन की कोशिशों को निरंतर जारी रखने की बात की जा रही थी। प्रिया टंडन ने आख़िर में कहा कि इस यात्रा के बाद अमरीका और ऑस्ट्रेलिया में भी ऐसे ही दल जाएँगे और वहाँ रहने वाले यहूदियों से भारतीय दल की मुलाक़ात करवाई जाएगी।

यरोशलम में आख़िरी रात

रात में इस्त्राईल के विदेश मंत्रालय की ओर से भारतीय दल को डिनर दिया गया। इस डिनर में ईस्त्राइली विदेश मंत्रालय की एक प्रमुख अधिकारी Ms. Ruth Kahanoff मुख्य अतिथि थीं। इस डिनर में ईस्त्राइली विदेश मंत्रालय के अधिकारी यही बातें कर के खुश हो रहे थे कि भारतीय दल की इस यात्रा से पश्चिम एशिया में शांति के नए द्वार खुलेंगे। मैं यही सोच रहा था कि यहाँ से वापस लौट कर डेलिगेशन के लोग अपने घर के द्वार खोलते हुए भी घबराएँगे तो भला पश्चिम एशिया में कौन सा दरवाज़ा खोल सकेंगे? मैं सोच रहा था कि एक ऐसा डेलिगेशन जिसमें कोई मौलाना उर्दू के अलावा कोई दूसरी भाषा नहीं जानता हो वह पश्चिम एशिया के मुसलमानों की क्या मदद करेगा? इस डिनर में इस्त्राईल के विदेश में कार्यरत एक ऐसे व्यक्ति से मेरी मुलाक़ात हो गई जिसका संबंध दरूज़ धर्म से था। मैं ईस्त्राइली विदेश मंत्रालय और भारतीय दल के बीच चल रही बातों को भूल कर मंसूर नाम के उस दरूज़ी से बातें करने लगा और उस के मज़हब के बारे में काफ़ी अच्छी जानकारी मुझे इस बातचीत के दौरान मिल गई।

जब हम लोग होटल के लिए चले तो ईस्त्राइली विदेश मंत्रालय का एक अधिकारी भी हम लोगों के साथ बस में बैठ गया। उस अधिकारी ने हम लोगों से कहा कि सुबह को ग़ज़्ज़ा में भारतीय दल पर हमास ने क़ुसाम मिज़ाइल से जो हमला किया था उसका बदला ईस्त्राइली सेना ने चुका दिया और जवाबी हमला करके 6 फिलिस्तीनी उग्रवादियों को मार दिया। इस सूचना से मेरा दिल जैसे बैठ सा गया और मन ही मन में अपने आप से घृणा से होने लगी। दिल में यही ख़्याल आया कि हम लोगों को ग़ज़्ज़ा की सीमा पर क्यों ले जाया गया जो हमारे 6 भाइयों की जान चली

गई। उदास मन के साथ मैं होटल पहुँचा।
आज होटल यरोशलम रीजन्सी में हम लोगों की अंतिम रात थी। हम लोगों ने प्रोग्राम यह बनाया था कि सुबह की नमाज़ मस्जिद-ए-अक़्सा में पढ़ कर हवाई अड्डे के लिए निकलेंगे। मैं बहुत कोशिश के बावजूद सो नहीं पा रहा था। कई बार लगा कि मेरे कमरे के दरवाज़े को कोई खटखटा रहा है। हर बार मैंने बाहर निकल कर देखा लेकिन वहाँ कोई नहीं था। दो तीन बार यह भी लगा कि कोई व्यक्ति बालकनी की तरफ़ से मेरे कमरे में झाँकने की कोशिश कर रहा है। इस परेशानी के कारण रात जाग कर ही गुज़री।
सुबह 4.30 बजे हम लोगों को एयरपोर्ट ले जाने वाली बस आ गई और हम सब मस्जिद-ए-अक़्सा होते हुए एयर पोर्ट जाने के लिए निकल पड़े। अभी अँधेरा फैला हुआ था फिर भी पुराने शहर के लोग जागने लगे थे और मस्जिद-ए-अक़्सा की तरफ़ कई बुज़ुर्ग और जवान चल पड़े थे। 5 बजे अज़ान हुई और थोड़ी ही देर में नमाज़ शुरू हुई। इमाम साहब ने दुआए क़ुनूत पढ़ाते हुए मुसलमानों के ख़िलाफ़ साज़िशें करने वालों की निंदा की और अल्लाह से दुआ की कि वह मुसलमानों को अपनी रहमत से नवाज़े। नमाज़ ख़त्म होने के बाद हम लोग को इमाम साहब से मिलने का अवसर मिला। उन्होंने भी इस बात की पुष्टि की, मस्जिद-ए-अक़्सा में तीन लोग नमाज़ की इमामत करने के लिए नियुक्त हैं जो अलग-अलग समय में नमाज़ें पढ़ते हैं। इसके बाद मैंने मस्जिद को आख़िरी सलाम किया और चलते वक़्त अल्लाह से दुआ की ‘ए मेरे मालिक अपने रहम और करम से मुसलमानों के सम्मान को बहाल कर, फिर मस्जिद-ए-अक़्सा मुसलमानों के कब्जे में आए, जब अगली बार(इन्शाअल्लाह) मस्जिद-ए-अक़्सा में आऊँ तो यहाँ मुसलमानों का राज हो (आमीन)

मस्जिद-ए-अक़्सा पर एक हसरत भरी नज़र डाल कर मैं बाहर निकला और क़रीब एक किलो मीटर पैदल चल कर बस पर सवार हो गया। जब सब लोग आ गए तो बस हवाई अड्डे के लिए चल पड़ी। 40 मिनट के बाद हम लोग हवाई अड्डे पहुंचे। यहाँ इसराईलियों की बहुत भीड़ थी। दिलचस्प बात तो यह है कि इस्राईल में बसने वाले लगभग सभी यहूदी दोहरी नागरिकता रखते हैं। यह लोग अमरीका और युरोप में काम करते हैं, साल भर वहाँ रहते भी हैं इस बीच इनके घरों में ताला पड़ा रहता है और यह लोग यहाँ छुट्टियाँ बिताने के लिए ही आते हैं। युरोप और अमरीका के स्कूलों में पढ़ने वाले यहूदी बच्चे भी यहाँ ग्रुप की शक्ल में आते हैं। जब यह यहूदी बच्चे बिन गुरियान एयरपोर्ट पर उतरते हैं तो इस्राईल का राष्ट्रीय गीत HATIKVA गाते हुए उतरते हैं। जिस दिन हम लोग पहुंचे थे उस दिन भी यहूदी बच्चे समूह गान करते हुए आ रहे थे और कई ग्रुप वापस जा रहे थे।
इस्राईल के एक ऐसा अकेला देश है जिसके एयरपोर्ट पर यहूदी धर्म के लोगों के अलावा किसी दूसरे धर्म के मानने वाले लोग दिखाई नहीं पड़ते जबकि दुनिया के किसी भी एयरपोर्ट पर जाइए तो आप को हर धर्म और जाति के लोग मिलेंगे।
इस्राईल के नागरिकों को एयरपोर्ट पर एक सुविधा यह भी प्राप्त है कि वह हवाई अड्डे पर लगी एक ख़ास मशीन में अपना पहचान पत्र डालते हैं और उस के बाद हाथ का पंजा मशीन पर लगे एक स्क्रीन पर रखते हैं उनके हाथों की लकीरों को अपने रिकार्ड से मैच करने के बाद वह आधुनिक मशीन उक्त यहूदी के देश में वापस आने की तारीख़ को सुरक्षित कर लेती है और उक्त व्यक्ति बिना इमिग्रेशन के आसानी से देश में प्रवेश पा जाता है। देश छोड़ते समय भी यही प्रक्रिया अपनाई जाती है। इस तरह समय की बचत होती है और लंबी लंबी लाइनें नहीं लगतीं।

स्वदेश वापसी

इमिग्रेशन से जान छूटी तो मैंने चैन की साँस ली और लाऊंज में आकर बैठ गया। यहाँ सुबह के अख़बार देखने को मिले तो कल के क़ुसाम मिज़ाइल के बारे में कुछ अलग ही तस्वीर थी। वापसी के वक़्त हम को उस समय तक कोई परेशानी नहीं हुई जब तक कि गाइड सोलोमन हमारे साथ था। हम लोगों को सामान इत्यादि बुक करने में कोई परेशानी नहीं हुई लेकिन इमिग्रेशन में पहुँचने के बाद मुझ समेत तीन लोगों के पासपोर्ट को बहुत देर तक इस्राईल की ख़ुफ़िया एजेंसी के लोगों ने अपने कब्जे में रखा। मेरे दादा तक का नाम पूछा गया। मैंने कहा औलाद हुसैन, शायर, मरहूम,,, फिर मुझ से कुछ नहीं पूछा गया और पासपोर्ट वापस मिल गया। दूसरे लोगों से भी ऐसे ही उल्टे सीधे सवाल पूछ कर उनके भी पासपोर्ट वापस कर दिए गए।

इमिग्रेशन से निजात मिली तो हम लोग लाऊंज में आकर बैठ गए यहाँ यरोशलम पोस्ट पढ़ने का मौक़ा मिला तो कल के क़ुसाम मिज़ाइल के हमले के बारे में बिल्कुल अलग ही ख़बर थी। अख़बार के अनुसार ईस्राइली फ़ौज ने ज़मीन से ज़मीन पर मार करने वाली मिज़ाइल से निशाना लगा बरीज रिफ़्यूजी कैंप के पास एक जीप पर सफ़र कर रहे 6 फिलिस्तीनी युवकों को मार दिया था। इन नव युवकों पर इस लिए हमला किया गया था कि इस्राईल को शक था कि यह नव युवक हमास के सेनानी थे। इस्राईल ने यह भी इल्ज़ाम लगाया था कि इन ही युवकों ने दो दिन पूर्व इस्राईल के सैनिक ठिकानों को मार्टर तोप से निशाना बनाया था (इस्राईल इस तरह के आरोप लगा कर अक्सर फिलिस्तीनी युवकों को शहीद कर देता है।) इस्राईल की सेना ने राजनीतिक फ़ायदा उठाने के लिए ठीक उसी वक़्त फिलिस्तीनी

नवजवानों को मारा था जब कि भारतीय दल सिदरोत में मौजूद था। इस्राईल के इसी हमले के जवाब में हमास ने सिदरोत पर दो मिज़ाइल दाग़ कर अपना रोष प्रकट किया था। असल में भारतीय डेलिगेशन का महत्व बढ़ाने के लिए ईस्राइली सरकार की ओर से इस प्रकार का नाटक किया था और उस को इतना लाभ हो भी गया कि भारत के कुछ समाचार पत्रों में यही ख़बर छपी कि भारतीय दल को ग़ज़्ज़ा से हमास ने निशाना बनाया। इस झूठे प्रचार के ज़रिये इस्राईल की सरकार दुनिया वालों पर यह सिद्ध करना चाहती थी कि हम तो अमन चाहते हैं लेकिन हमास के लोग शांति के ख़िलाफ़ काम कर रहे हैं। इसी झूठे प्रचार की नीति के तहत कई ईस्राइली अफ़सर बराबर यह बात कह रहे थे कि भारत में जो रोष प्रकट किया जा रहा है वह अमन से दुश्मनी रखने वाले लोग कर रहे हैं । कुछ भारतीय मुसलमान शांति नहीं चाहते इस लिए वह इस दल के यहाँ आने का विरोध कर रहे हैं। असल में इसराईली और अमरीकी कोई भी ऐसा मौक़ा हाथ से जाने नहीं देते जिससे मुसलमानों या इस्लाम को बदनाम कर सकें।

अगर इस्राईल को शांति से इतना ही प्यार है तो इतनी दूर से कुछ गुमनाम भारतीय लोगों का दल बुलाने की क्या ज़रूरत थी? यह काम तो वह अपने पड़ोस में बैठे महमूद अब्बास के ज़रिये भी कर सकता था। महमूद अब्बास तो इस्राईल के गहरे दोस्त बन गए हैं फिर यह नाटक क्यों? इतिहास गवाह हय कि इस प्रकार के तमाम प्रतिनिधि मंडलों का इस्राईल ने अपने फ़ायदे के लिए इस्तेमाल किया है और इनके ज़रिये दुनिया को अमन के नाम पर धोखा देना चाहा है।

इस्राईल के अख़बारों में तरह तरह की ख़बरें पढ़ने को मिलती थी कुछ ख़बरें तो इस्राईल वालों के लिए एक बुरी ख़बर का दर्जा

रखती थी लेकिन मुसलमानों के हिसाब से वह अच्छी ख़बर थीं। एक अख़बार ने इस बात पर चिंता जताई थी कि पश्चिमी किनारे पर हमास ने अपने क़दम जमा लिए हैं और उस की लोक प्रियता दिन प्रतिदिन बढ़ती ही जा रही है। कुछ अख़बारों ने ऐसी भी ख़बरें छापी थीं कि हमास के हथियार बंद समर्थकों ने अल-फ़तह के कब्जे वाले इलाक़े में अपने अड्डे स्थापित कर लिए हैं। ईस्राइली जनता के लिए यह ख़बर भी चिंता का विषय थी कि हमास और अल-फ़तह एक दूसरे के क़रीब आने की कोशिश कर रहे हैं। यानी दो भाइयों के बीच एकता पैदा होना उनके लिए ख़तरनाक था। सीरिया में महमूद अब्बास के साथी जिबरइल रजब ने हमास के रहनुमा ख़ालिद मिशअल से ख़ुफ़िया तौर पर मुलाक़ात कर के समझौते का रास्ता ढूँढ़ने की कोशिश की है। इस बात को ले कर भी ईस्राइली बहुत चिंतित थे। असल में ईस्राइली सरकार नहीं चाहती कि हमास और अल-फ़तह के लोग एक दूसरे के क़रीब आएँ इस लिए वह हर उस बात से चिंतित हो जाती है जिससे हमास को मज़बूती मिले।

ईस्राइली सरकार की ओर से हमास के ख़िलाफ़ लगातार झूठा प्रचार किया जा रहा है लेकिन उस की लोकप्रियता घटने के बजाए बढ़ती ही जा रही है। इस से दुखी हो कर अब इस्राईल की तरफ़ से यह प्रचार किया जा रहा है कि हमास शिया वर्ग से मदद ले कर अल-फ़तह के ख़िलाफ़ नए मोर्चे स्थापित कर रही है। यह बात सब जानते हैं कि हमास भी सुन्नी मुसलमानों का संगठन है और अल-फ़तह भी। इस लिए इन दोनों को आपस में लड़वाते रहने के लिए यह बहुत ज़रूरी है कि किसी एक ग्रुप पर शिया समर्थित होने का लेबल लगाया जाए। वैसे अब मुसलमान यह बात समझ चुके हैं कि इस्राईल के लोग शिया सुन्नी के नाम पर इस्लाम में फूट डालना चाहते हैं। इसी लिए हमास के एक नेता ने

शियों से मदद लेने के इल्ज़ाम का जवाब देते हुए कहा कि अमरीका और इस्राईल से सहायता लेने के स्थान पर शियों से मदद लेना उचित है क्योंकि वह मुसलमान हैं और मुसलमान से मदद लेने में कोई हर्ज़ नहीं है।

इस किताब के अंत में कुछ अन्य मगर महत्व पूर्ण बातें लिखना आवश्यक समझता हूँ जिनके विषय से अलग हटे होने के कारण बीच में लिखना संभव नहीं था।

इस्राईल में रहने वाले मुसलमानों में अधिकतर लोग मज़दूरी करके जीविका चलाते हैं। जहाँ जहाँ भवन निर्माण का कार्य चलता हुआ नज़र आए वहाँ आपको फिलिस्तीनी युवक अपने गाढ़े ख़ून को पसीने की शक्ल में बहाते हुए दिखाई पड़ेंगे।

इस्राईल में बसने वाले मुसलमान सिर्फ़ छोटे मोटे काम धंधे करने का अधिकार ही रखते हैं। अमीर वर्ग केवल यहूदी समुदाय में पाया जाता है। मुसलमान मध्यम वर्ग से आगे की बात सोच भी नहीं सकते। मस्जिद-ए-अक़्सा के अंदर आप को बुर्क़ा ओढ़े बहुत सी महिलाएँ दिखाई पड़ेंगी जो या शेख़,,, या शेख़,,, सदक़ा,, कह कर आप से आर्थिक सहायता माँगेगी। अनेक अपंग लोग भी मस्जिद की सीढ़ियों पर भीख माँगते हुए मिलते हैं।

मुसलमानों के इलाक़ों में टूरिस्ट आना बंद हो चुके हैं। मस्जिद-ए-अक़्सा में दूसरे धर्मों के लोगों का प्रवेश वर्जित है। इस लिए किसी अन्य धर्म के लोग यहाँ पर्यटन की दृष्टि से नहीं आते और विश्व के अन्य भागों में रहने वाले मुसलमानों को ईस्राइली सरकार यहाँ आने नहीं देती। इस लिए टूरिस्ट नाम की कोई चीज़ यहाँ के लोग नहीं जानते। एक स्थानीय व्यक्ति ने बताया कि भारत का कोई टूर ऑपरेटर कुछ वर्ष पहले तक कुछ ज़ायरीन को जार्डन के रास्ते से यरोशलम तक लाता था लेकिन अब वह सिलसिला भी बंद हो चुका है।

यरोशलम के पुराने इलाक़े में दुकानें सूरज डूबने से पहले ही बंद होने लगती हैं। जब मैंने देखा कि शाम की नमाज़ से पहले ही दुकानदार अपनी दुकानें बंद करके जाने लगे तो मैंने एक फिलिस्तीनी लड़के से पूछा कि यहाँ दुकानें इतनी जल्दी क्यों बंद हो रही हैं तो उस ने कहा कि यहाँ शाम के वक़्त निकलने वालों को पुलिस बहुत तंग करती है इसलिए आम नागरिक अपने-अपने घरों में ही रहने को तरजीह देते हैं। जब लोग घरों से ही नहीं निकलेंगे तो हम सामान किसके हाथ बेचेंगे? इसी लिए सारा बाज़ार मग़रिब की नमाज़ से पहले ही बंद हो जाता है। उस लड़के ने ईस्त्राइली सैनिकों की उपस्थिति में बहुत बहादुरी के साथ कहा कि इन ही लोगों की वजह से हम बरबाद हो रहे हैं। अल्लाह इन के कब्जे से हमें मुक्ति दिलाए।

मस्जिद-ए-अक़्सा के आस पास की गलियों में अरब की पुरानी तहज़ीब के निशान आज भी साफ़ तौर पर दिखाई पड़ते हैं। जगह जगह पतली पतली गलियाँ हैं जिनमें चढ़ाई और उतार का बहुत अच्छा समावेश है। एक पतली सी गली में एक दुकान के बाहर हुक़्क़ा पी रहे युवकों के साथ मैंने भी एक कश लगाया तो वह नवजवान बहुत खुश हुए।

इस के बाद कुछ ऐसे क़िस्से लिखना भी ज़रूरी हैं जिनको पढ़ कर शायद हमारे पाठकों को मज़ा आए।

जब मैं दिल्ली से मुम्बई के लिए एयर इंडिया से रवाना हुआ तो मेरे बराबर वाली सीट पर भारतीय दल में शामिल एक मौलाना बैठे थे। उनसे मेरा चंद मिनट पहले ही परिचय हुआ था, मौलाना ने मुझ से पूछा कि हम लोग इस्त्राईल किस लिए जा रहे हैं? मैंने कहा कि यह तो आप को मालूम होगा। इस पर उन्होंने कहा कि मुझ से तो इतना ही कहा गया है कि हम को मस्जिद-ए-अक़्सा में नमाज़ पढ़ने का मौक़ा मिलेगा।

मुम्बई में उतरने के बाद मैंने दूसरे सदस्य से पूछा कि क्या उन्हें मालूम है कि वह इस्राईल जा रहे हैं? इस पर उन्होंने कहा कि इस्राईल में एक अंतर्राष्ट्रीय शांति सम्मेलन हो रहा है और हम लोग इस कान्फ्रेंस में भारत का प्रतिनिधित्व कर रहे हैं। जबकि इस्राईल में न तो कोई ऐसी कान्फ्रेंस थी न ही किसी देश से शांति का ठेकेदार कोई दल आया था। ऐसा लगता था कि इन लोगों को बुलाने वालों ने इन को धोखे में रखा था।

एक और दिलचस्प क़िस्सा यहाँ लिखना ज़रूरी है। जब हम लोग रमल्ला के भारतीय राजनयिक मिशन से वापस चलने लगे तो भारतीय दल के एक सदस्य ने एक बहुत ख़ूबसूरत चादर निकाल कर भारतीय दूतावास के प्रतिनिधि श्री ज़िकर-उर-रहमान को पेश करते हुए कहा कि यह चादर हम मरहूम यासिर अरफ़ात के मज़ार पर चढ़ाने के लिए लाए थे,,, उनकी बात काटते हुए ज़िकर-उर-रहमान साहब बोले कि और अब मेरे मज़ार पर चढ़ा रहे हैं,,, सब लोग हँसते हँसते लोट पोट हो गए।

मेरा इस्राईल का सफ़र यहीं पर ख़त्म हुआ और हम लोग अपने देश के लिए चल पड़े। सुबह 10:30 बजे (भारतीय समय के अनुसार 12:30 पर) हमारी Flight मुम्बई के लिए रवाना हुई। साढ़े सात घंटे के उकता देने वाले सफ़र के बाद रात आठ बजे हम लोग मुम्बई पहुंचे। प्रतिनिधि मंडल के लोगों ने अपने भारत आने की सूचना किसी को नहीं दी थी क्योंकि उन्हें उत्तेजित मुसलमानों का डर था। यह लोग बड़ी ख़ामोशी से मुम्बई में घूमने फिरने निकल गए क्योंकि दिल्ली की Flight सुबह को थी। मुझे कुछ देर अपने बेटे इमरान शमसी के पास ठहर कर रात 2 बजे दुबई के लिए रवाना होना था। इस लिए यहाँ से मेरी और प्रतिनिधि मंडल के सदस्यों की राहें अलग हो गई।

इस्राईल के सफ़र के दौरान मुझे जहाँ मस्जिद-ए-अक़्सा में नमाज़

पढ़ने का अवसर मिला वहीं अपनी पत्रकारिता की ज़िंदगी में कुछ नए अनुभवों से रूबरू होने का मौक़ा मिला।
मैं दुबई में 5-6 दिन रह कर भारत वापस आ गया जिस दिन मैं दुबई से वापस आया तो अज़ीज़ बरनी साहब ने कहा कि अब लिखें, निर्भीक हो कर लिखें, सच बात लिखें, जो देखा जो महसूस किया, जो सुना वह सब लिखें और जब तक आप की क़िस्तें पूरी न हो जाएँ लिखते रहें। उनके तेवर देख कर मुझे लगा कि अगर वह खुद इस सफ़र पर जाते तो बात ही कुछ और होती। इस्राईल के ज़ुल्म व सितम,,, फिलिस्तीनियों की मज़लूमी,,, इस क्षेत्र का इतिहास, वहाँ के भौगोलिक हालात, वहाँ की समस्याओं और शांति प्रतिनिधि मंडल के बारे में वह इतना ज़ोरदार तरीक़े से लिखते कि उनकी पुस्तक एक दस्तावेज़ की शक्ल में रखी जाती।
पत्रकारिता एक ऐसा पेशा है कि आप को दुश्मन के घर से भी ख़बर निकालना पड़ती और दोस्त की ख़बर भी रखना पड़ती है। हर पत्रकार के विचारों का अंदाज़ा उस के द्वारा किसी समाचारपत्र की गई टिप्पणी से ही किया जा सकता है। किसी भी समाचारपत्र में छपने वाली ख़बरों छुपी सच्चाई से ही उसकी अहमियत का अंदाज़ा लगाया जा सकता है। उर्दू रोज़नामा राष्ट्रीय सहारा का प्रतिनिधि अगर इस यात्रा पर न जाता (जैसा कि कुछ लोग चाहते थे) तो क्या भारतीय दल की गतिविधियों और इस्राईल की चालबाज़ी की किसी को कोई सूचना मिल पाती?
मेरे सफ़रनामे के प्रकाशन का सिलसिला जब शुरू हुआ तो पाठकों ने इसमें अपार दिलचस्पी दिखा कर मेरा बहुत हौसला बढ़ाया। हर सुबह लोगों को अगली क़िस्त का इन्तिज़ार रहता था। कई इलाक़ों में उर्दू रोज़नामे की सारी कॉपियाँ सुबह सवेरे ही बिक जाती थीं। टेलिफ़ोन, ई-मेल, फ़ैक्स और पत्रों द्वारा लोगों ने मेरी यात्रा के विवरण की बहुत तारीफ़ की। एक बार फिर सहारा ने

साबित कर दिया कि सच के मामले में सहारा बहुत निर्भीक और निष्पक्ष है।

मेरी तरफ़ से सच्चाई लिखे जाने के बावजूद भारतीय डेलिगेशन के एक सदस्य ने मुझ से शिकायत की कि मैं उनके चरित्र पर कीचड़ उछाल रहा हूँ तो मैंने उन से कहा कि मैंने अधिकतर मामलों में सदस्यों के नाम नहीं लिखे और इस का फ़ैसला पाठक स्वयं फ़ैसला कर सकते हैं कि मैंने किसी को बदनाम करने के उद्देश्य से यह सफ़रनामा लिखा है या केवल एक पत्रकार के दायित्व का निर्वाह किया है।

मुझे यक़ीन था कि प्रतिनिधि मंडल के लोग भी भारत लौटने के बाद कुछ न कुछ सच्चाई ज़रूर बयान करेंगे और अगर मेरी बातें झूठ है तो वह खुद इस का खंडन करेंगे या फिर इस्त्राईल के दूतावास से इन बातों का खंडन करवा देंगे। लेकिन न तो उन्होंने खुद ऐसा किया न ही इस्त्राईल के दूतावास ने कोई खंडन किया। बल्कि भारतीय दल में शामिल एक सदस्य ने मुझे फ़ोन करके इस सफ़रनामे पर मुबारक बाद दी।

अब यह सफ़रनामा एक पुस्तक के रूप में आप के हाथ में है। मुझे आशा है कि आप के मन में बैठे बहुत से सवालों के जवाब मिल जाएँगे।